सुदामचरितम्



महोपाध्याय पं० लोकनाथ मिश्र

सुदामचरितम्

श्रीकृष्णाद्यनेकस्तवोपेतम्

कविवर लोकनाथ मिश्र प्रणीतं

कवितार्किक नृसिंहदेव शास्त्रिणा
संशोधितम्

हिन्दीभाषानुवादसहितम्

अमूल्य लभ्यम्

प्रकाशक : देवीदत्त
२/६, ईस्ट पटेल नगर, नई दिल्ली-११०००८

●

प्रथमावृत्ति : ५०० प्रतियाँ, गुरु पूर्णिमा
सम्वत् १९६९ सन् १९१२ ई.

●

द्वितीयावृत्ति : १००० प्रतियाँ, अक्षय तृतीया, परशुराम जयंती
सम्वत् २०५४ सन् १९९७

●

चतुर्थावृत्ति : ११०० प्रतियाँ, मकर संक्रान्ति
सम्वत् २०५४ सन् १९९८

●

पंचमावृत्ति : ११०० प्रतियाँ, गुरु पूर्णिमा
सम्वत् २०५७ सन् २००१

●

सौजन्य : श्री सत्यनारायण प्रकाश (सत्ती) पुंज

●

अक्षरयोजन : अक्षर लोक, ४६७९, शोरा कोठी, पहाड़ गंज,
नई दिल्ली-११००५५ दूरभाष : ३५१४५०३

●

मुद्रक : कोणार्क प्रेस
५/२०१, ललिता पार्क, लक्ष्मी नगर, दिल्ली-११००९२

सुदामचरितम्

श्रीकृष्णाद्यनेकस्तवोपेतम्

प. विवर लोकनाथ मिश्र प्रणीतं

कवितार्किक नृसिंहदेव शास्त्रिणा

संशोधितम्

सन् १९१२ ई०

लाला लाक्षमणप्रबन्धेन लाहौर पञ्जाब

एकानोमीकल यन्त्रालये मुद्रितम्।

प्रथमावृत्ति ५००] [अमूल्य लभ्यम्

सन् १९१२ में प्रकाशित प्रथमावृत्ति का मुखपृष्ठ १००९

पुण्य स्मृति में

सुदामचरितम् काव्य के रचयिता पं. लोकनाथ जी मिश्र के सुपुत्र स्वनामधन्य पं. देवीदत्त जी की प्रेरणा, प्रोत्साहन तथा आशीर्वाद से इस काव्य के पाठ की प्रतियोगिता गत अनेक वर्षों से हरिद्वार तथा दिल्ली में चल रही है। वास्तव में यह प्रतियोगिता पं. लोकनाथ जी तथा पं. देवीदत्त जी के प्रति अपने श्रद्धा-सुमन अर्पण करने का ही एक प्रयास है।

गत वर्ष २८-१०-२००० को पं. देवीदत्त जीं के स्वर्गवास के पश्चात उनके नाम से एक "चल-वैजयन्ती Running Trophy" का समावेश भी इस वर्ष से इस प्रतियोगिता में किया गया है। इस विश्वास के साथ कि पूज्य पंडित जी की स्मृति उनके वरद हस्त के रूप में इस प्रतियोगिता में भाग लेने वालों को सदैव आशीर्वाद एवं बल प्रदान करती रहेगी।

विनीत

सत्यनारायण प्रकाश (सत्ती) पुंज

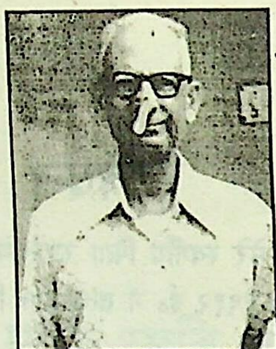
निवेदन

यह पुस्तिका मेरे स्वर्गीय पिता रावलपिंडी निवासी पंडित लोकनाथ मिश्र ने सन १९१२ ई० में तत्कालीन विद्वन्मंडली को भेंट की थी।

अब यह हिन्दी रूपान्तर सहित अपने दोनों स्वर्गीय भ्राता पं॰ केशवानंद व पं॰ दीनानाथ जी की पुण्य स्मृति में कृष्ण प्रेमियों की सेवा में प्रस्तुत है।

इसके रूपान्तर तथा छपाई कार्य के लिये मैं श्री चिरंजीव शास्त्री जी का आभारी हूँ।

देवीदत्त,
२/६, ईस्ट पटेल नगर,
नई दिल्ली-८



पं. देवीदत्त जी : एक महान व्यक्तित्व

अविभाजित पंजाब के प्रसिद्ध नगर रावलपिण्डी में प्रख्यात विद्वान पं. लोकनाथ जी मिश्र के यहां दिनांक २८ अप्रैल १९०८ को जन्म। बचपन से ही मातृ-पितृ-छाया से वंचित। रावलपिण्डी के गार्डन कॉलिज से १९२७ में प्रथम श्रेणी में बी.ए. आनर्स परीक्षा उत्तीर्ण की। १९३० में दिल्ली के सेना मुख्यालय में नौकरी शुरू कर १९६६ में नेशनल डिफेंस कॉलेज के सचिव पद से सेवानिवृत्त। संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी, उर्दू, फ्रेंच, जर्मन भाषाओं पर समान अधिकार।

१९५६ में लायंस क्लब के संस्थापक सदस्य तथा बाद में १९६१ में उत्तर भारत के गवर्नर। तीन मूर्ति के पास लायंस विद्या मन्दिर की स्थापना। सनातन धर्म प्रतिनिधि सभा पूर्वी पटेल नगर के वर्षों तक महामंत्री एवं संरक्षक, सनातन धर्म कन्या उच्चतर विद्यालय तथा एस.डी. पब्लिक स्कूल के संस्थापक सदस्य एवं वर्षों तक अध्यक्ष रहे।

गीता का हिन्दी-अंग्रेजी में पद्यानुवाद, कालिदास ग्रन्थावली, स्वप्नवासवदत्तम् किरातार्जुनीयम्, दैनिक सन्ध्या के अंग्रेजी में पद्यानुवाद किये।

लगभग ९३ वर्ष की अवस्था में कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा संवत् २०५७ (२८-१०-२०००) में दिल्ली में देहान्त।

ॐ

श्रीकाश्यां पठतानेन लोकनाथेन सूरिणा श्रीमद्विद्वच्छिरोरत्नमहामहोपाध्यायशिवकुमारसुकुमारकुमारयोः व्रतबन्धविवाहमंगलमहोत्सवनिमित्तिकायां विद्वत्संसदि निरवद्यं पद्यद्वयं निर्मायाश्रावि प्राप्तश्च धन्यवादः सभातो द्विगुणामानपूजा च।

तच्च :-

पितुरिवास्तु दिगन्तविलम्बिनी,
विबुधवृन्दधियामपि मोहिनी।
अयि सुधांशुसमानन ते क्षितौ,
शिवकुमारकुमार सरस्वती ।१।
भर्तुर्हिताय निरताविरता तदीय,
चेष्टाविरोधिषु पदार्थशतेषु भद्रे।
सम्पत्सु वा विपदि वेंदुमतीव भर्त्रा,
साकं सदा वस कुमारि शिवञ्च तेस्तु।।२।।

ॐ

काशी मे पढ़ते हुए इन विद्वान लोकनाथ ने विद्वच्छिरोमणि श्रीयुत महामहोपाध्याय शिवकुमार जी के दो सुकुमार बालको के मांगलिक विवाहोत्सव के अवसर पर व्रतबंध (गठजोड़े) के समय उस निमित्त एकत्रित विद्वत्समाज में दो निर्दोष पद्यों की रचना कर के उन्हे सुनाया था और सभा से धन्यवाद तथा दूना मान-सम्मान प्राप्त किया था। वे दो श्लोक हैं -

हे शिवकुमार जी के चन्द्रसमान मुख वाले पुत्र ! पृथ्वी पर तुम्हारी सरस्वती (ज्ञान-संपदा) तुम्हारे पिता के समान सब दिशाओं के छोरो तक फैलने वाली एवं विद्वानो के समाज की बुद्धियो को भी

मोहित करने वाली बने।। १।।

हे शिवकुमार जी की पुत्रवधू ! तुम पति के हित मे लगी रहना। उस की चेष्टाओं से विरोध करने वाले सैंकड़ों पदार्थों से भी विमुख रहना। सम्पदाओं तथा विपदाओं में इन्दुमती (रघुवंशी अज की पत्नी) के समान सदा साथ रहना। तुम्हारा कल्याण हो।

अहोरात्रानृततदितरक्षुत्पिपासाजरामृत्युशोकमोह-प्रमुखप्रतिद्वन्द्विभावस्वभावपुण्यापुण्याद्यनेकविधनि:साराऽनिर्वाच्यपदार्थभरपूरिते संसृतिवर्त्मनि दुर्जरा-जरञ्जरीभावजरणाय 'श्रद्धाभक्तिध्यानयोगादवेहि' 'ब्रह्मतत्त्वानुसन्धानं भक्तिरित्यभिधीयते'' नैर्गुण्यस्था रमन्ते स्म इत्थम्भूतगुणो हरि' रित्यादि: श्रुतिस्मृति सहस्रवचनैर्मुक्तकण्ठतया हरेरहैतुकी भक्तिरेव मु-ख्यतयाभिधीयतइति नाविदितं विदुषाम्, तदनुयायिना निजजनिं सफलां कुर्व्वाणेन कविना श्रीलोकनाथमिश्रेण प्रसादगुणवत्काव्यं सुदामचरितं नाम प्राणायि, अहञ्च तत्संस्करणायाभ्यधायि, तन्मयाद्यापि निरन्तररोगभरमन्थ-रेण यथवसरं सुसंस्कृतं तथापि सीसकाक्षरयोजकप्रमादेन वा ममानवधानतया वासम्भव्येतापि कुहत्यमसंस्करणमत क्षमन्तान्तरा विद्वांस इति सानुनयमभ्यर्थयते-...

नृसिंह [illegible] शास्त्री।

विद्वानों को यह अज्ञात नहीं है कि दिनरात, सत्य-असत्य भूख-प्यास, बुढ़ापा-मृत्यु तथा शोक एवं मोह आदि परस्पर विरोधी भावों के स्वभाव वाले, पाप-पुण्य आदि अनेक प्रकार के नि:सार और विचित्र प्रकार के पदार्थों से भरे हुए संसार-मार्ग मे कठिनाई से जीर्ण किये जाने योग्य जरा-मृत्यु तथा अजरता(आवागमन) के भाव से मुक्त होने के लिये श्रुतियों तथा स्मृतियों में "श्रद्धा भक्ति और ध्यानयोग से

(ईश्वर को) जानो," "ब्रह्मत्व का अनुसंधान भक्ति कहलाता है," "गुणातीत अवस्था में स्थित हो कर विहार करते थे," "भगवान इस प्रकार के गुणों वाले हैं," इत्यादि हजारों वचनों से भगवान की अहैतुकी भक्ति ही मुख्य रूप से आवश्यक बताई है।

इन वचनों का अनुसरण कर, अपने जन्म को सफल बनाने वाले कवि श्री लोकनाथ मिश्र ने प्रसाद गुण से युक्त 'सुदामचरितम्' नामक काव्य की रचना की है। उन्होनें मुझे इस के सम्पादन के लिये कहा। मैंने आज भी निरन्तर नाना रोगों से शिथिल होते हुए भी जब जैसी आवश्यकता हुई इस का यथावसर भली भाँति सम्पादन कर दिया है। तथापि कम्पोजीटर लोगों के प्रमाद से या मेरी असावधानी से कहीं-कहीं यदि अशुद्धियां आ गईं हों तो इस विषय में विद्वान लोग क्षमा करेंगे यह प्रार्थना है ।

नृसिंहदेव शास्त्री
(तत्कालीन) संस्कृत प्राध्यापक
ओरियंटल कालेज
पंजाब विश्वविद्यालय
लाहौर

सुदामचरितम्

कृष्णं वृष्णिपतिं नवीनजलदश्यामं सुदाम्नः प्रियं,
गोपीवल्लभमब्जनाभममलं धीरं प्रवीरं वरम्।
धन्यैर्गोपगणैर्बलेन च युतं गाश्चारयन्तं वने,
चेतश्चिन्तय चिन्तनीयचरणञ्चाणूरसञ्चूर्णनम्। १।

हे मन ! वृष्णिवंश के स्वामी,नये मेघ के समान रंग वाले सुदामा के प्रिय मित्र, कमलनाल के सदृश निर्मल, गोपियों के वल्लभ, धैर्यवान्, वीरों में श्रेष्ठ, गोपों तथा बलराम जी के साथ गायों को चराने वाले, चाणूर को विनष्ट करने वाले तथा ध्यानयोग्य चरणों वाले कृष्ण का चिन्तन कर।।१।।

वृथा न मे स्याद्वचसां प्रचारः,
पराङ्मुखी नापि मनःप्रवृत्तिः।
सार्थो यथा स्यात्समयो ममायं,
विचिन्त्य वच्मीति हरेर्गुणांस्ते।।२।।

हमारी वाणी व्यर्थ न हो, मन की प्रवृत्ति अन्य कार्यों में न लगे, मेरा यह समय सार्थक हो, ऐसा विचार करके तुम्हें प्रभु के गुणों का वर्णन करता हूँ।।२।।

ब्रह्मण्यदेवस्य यदूत्तमस्य,
श्रियःपतेः प्रीतिविवर्धनः सः।
सखा सुदामा दमतत्परोऽभूद्,
गृहस्थधर्माभिरतो दरिद्रः।३।

ब्रह्मज्ञों के ईश्वर, यादवों में श्रेष्ठ, लक्ष्मीपति श्री कृष्ण के,

उनकी प्रीति को बढ़ाने वाले, आत्म-दमन में तत्पर, गृहस्थाश्रम धर्म का पालन करने वाले सुदामा नामक अत्यन्त निर्धन मित्र थे।।३।।

तम्ब्राह्मणी ब्रह्मरतं दरिद्रा,
भूरिप्रजा जीर्णपटं वसाना।
क्षुत्क्षामदेहाऽश्रुमुखी वराकी,
बद्धाञ्जलिर्वाचमुवाच नम्रा।। ४।।

उनकी ईश्वर के ध्यान मे रहने वाली, निर्धन, बहुत सी सन्तानों वाली, फटे-पुराने वस्त्रों को धारण करने वाली, भूख-प्यास से व्याकुल देह वाली होकर आंसू बहाने वाली, बेचारी ब्राह्मणी विनम्रतापूर्वक हाथ जोड़ कर बोली--- ।।४।।

ब्रह्मन् भजस्यविरतं भगवन्तमेव,
रात्रौ दिने च विरतो गृहकर्मणि त्वम्।
नास्मान्विलोकयसि दीनतरांस्तपस्वि-
न्नन्नार्थिनः किमु कलत्रसुतातनूजान्।।५।।

हे ब्रह्मन् ! आप गृहकार्यों(आवश्यकताओं) से अलग रहकर दिन-रात ईश्वर की आराधना में लगे रहते हैं। हे तपस्वी! आप अन्न की इच्छा रखने वाली अपनी अत्यन्त दुखी पत्नी एवं सन्तानों की ओर नहीं देखते।।५।।

मां पश्य ते प्रियतमां गृहिणीं सुशीलां,
लीलाविलासविकलां सकलार्थहीनाम्।
क्षीणानिमान्मृदुतनूंस्तनुजासुतांस्त्वं,
कस्माद्विलोक्य न विषीदसि विद्वराद्य।।६।।

हे ब्राह्मणों में सर्वप्रथम गिने जाने वाले ! गृहकार्यों को करने

वाली, सुशील, तरह-तरह के आमोद-प्रमोद के लिये व्याकुल, सभी वस्तुओं से हीन, अपनी पत्नी तथा अत्यन्त क्षीण-कोमल शरीर वाले अपने लड़के-लड़कियों की ओर देखकर आप दुखी क्यों नहीं होते।।६।।

भर्त्तर्भवे भगवतो ननु भक्तिरेव,
सारं न चान्यदिति वेदविदो वदन्ति।
येऽन्धोभविष्यति नवाद्य विचिन्तयेति,
कालं वियन्ति किमु ते न हरिं स्मरन्ति।।७।

हे पतिदेव ! इस संसार रूपी समुद्र को पार करने के लिये भक्ति ही एक आश्रय है, दूसरा नहीं, ऐसा वेदों के ज्ञाता कहते हैं। इसको न विचार करके लोग समय व्यतीत करते रहते हैं और हरि का स्मरण नहीं करते। ।।७।।

स त्वं हरिं स्मर जनार्तिहरं प्रकामं,
शास्त्रञ्च शासय सुखेन सदा परन्तु।
अस्मांस्त्वदेकशरणान्भरणाय कोऽन्यो,
भूयादिति प्रिय विचिन्त्य कुरुष्व यत्नम्।।८।।

लोगों के दुखों को दूर करने वाले प्रभु का स्मरण तथा सर्वदा शास्त्रों के अनुशीलन में आप लगे रहें,परन्तु हम सभी लोग, जो एकमात्र आपकी शरण में हैं उनका भरण-पोषण करने वाला अन्य कौन होगा? हे विप्र! ऐसा सोचकर आप यत्न करें। ।।८।।

बाला इमे प्रियतमाश्च तथा कुमार्यो,
मात्रा विभूषिततनूस्वसखान्समीक्ष्य।
मामेत्य दीनवदना मुहुरर्थयन्ति,
वस्त्रं यदा जननि देहि विभूषणञ्च।।९।।

ये अबोध बालक अपनी माता के द्वारा सुसज्जित शरीर वाले मित्रों को देखकर दुःखी मन से मेरे पास आकर बार-बार याचना करते हैं कि हे मां ! हमें भी वस्त्र और आभूषण दो। ।।९।।

श्रुत्वेति कोमलगिरां वचनं शिशूनां,
कान्त त्वदीयदयिताऽहमवाङ्‌मुखीना।
रोदिम्युदश्रुवदना कृपणा स्वसद्म,
शून्यं तदानुसवनञ्च विलोकयन्ती।।१०।।

हे पतिदेव! कोमल वाणी वाले बालकों के वचनों को सुनकर तुम्हारी यह बेचारी पत्नी अपने खाली घर को देखते हुए नीचे मुख करके दुःखी होकर रोने लगती है।।१०।।

साहं तवातियशसो विदुषां वरस्य,
पत्नी मनोहरतरापि पतिव्रतापि।
वासोविभूषणवरैरविभूषिताङ्गी,
पुष्णाम्यहो कथमिमां स्वशरीरशोभाम्।।११।।

आप जैसे यशस्वी, विद्वान की मनोहर पतिव्रता अच्छे वस्त्राभूषणों से अविभूषित अंगों वाली अपने शरीर की शोभा को कैसे बढ़ा सकती है। ।।११।।

स्वामिन्नमी द्विजवरा हरिभक्तिमन्तो,
विद्यां पठन्ति च वटूनपि पाठयन्ति।
सर्वे कुटुम्बनिरता विरताश्च लोकात्,
कालाऽनुसारि किमु कर्म न भावयन्ति।।१२।।

हे स्वामी ! ये ब्राह्मणों में श्रेष्ठ, ईश्वर के भक्त, विद्याध्ययन करने तथा ब्रह्मचारियों को पढ़ाने वाले, कुटुम्ब-पालन में लीन और

लोक से विरत लोग गृहस्थाश्रम की आवश्यकता एवं समयानुसार कर्म क्या नहीं करते हैं। ।।१२।।

एतं विचार्य सुधिया नयमार्यपुत्र,
पुत्रानिमानपि च माञ्च तथा किशोरीः।
त्वं पालयाशु जहि चालसतां महात्मन् ,
स्वात्मानमुद्धर दरिद्रसमुद्रमग्नम्।।१३।।

बुद्धिपूर्वक नीति का विचार कर हे आर्यपुत्र! अपने इन पुत्रों-पुत्रियों तथा मेरा पालन-पोषण करें। तथा हे महात्मन्! आलस्य त्याग कर दरिद्रतारूपी समुद्र में मग्न आप अपना भी उद्धार करें। ।।१३।।

निःस्वं त्यजन्ति मनुजं सहजा अपि स्वे,
निःस्वाद्बिभेति जनता वनिता अपि स्वाः।
निःस्वस्य नास्ति गतिरत्र परत्र लोके,
निःस्वं जनं न जनयेज्जननीह काचित्।।१४।

निर्धन पुरुष को अपनें सगे भाई भी त्याग देते हैं। निर्धन से जनता और पत्नी भी डरती है। निर्धन की इस लोक में तथा परलोक में गति नहीं है। निर्धन पुरुष को इस संसार में कोई मां जन्म न दे। ।।१४।।

सन्ध्यां करोषि च यथाऽनतिवेलमार्य,
नित्यं यथापि भजसे व्रजभूषणांघ्रिम्।
अध्यापयस्यनुदिनं निगमं द्विजांस्त्वम्,
विद्वंस्तथानुसमयं भर कुटुम्बम्।।१५।।

जिस तरह आप नित्य समय से संध्या करते हैं, जिस तरह

नित्य भगवान का भजन करते हैं तथा वेदाध्ययन करते हैं, उसी तरह हे विद्वन्! परिवार का पालन-पोषण समयानुसार कीजिये। ।।१५।।

ईदृग्विधं द्विजवरं हरिपादपद्म-
सौरभ्यलुब्धमधुपं हृदयङ्गमन्त्वाम्।
ब्रूयां कदापि न च किञ्चिदपि प्रभोऽहं,
गेहस्थधर्मभरखिन्नमना न चेत्स्याम्।।१६।।

हे द्विजवर! इस प्रकार भौंरे की तरह भगवान के चरण कमल की सुगन्धि के लोलुप आपको, यदि मैं गृहस्थ धर्म पालन में मन वाली न होती तो कुछ भी न बोलती। ।।१६।।

इत्थं कुटुम्बभरणाक्षमया गृहिण्या,
किञ्चित्सरोषकरुणाविलनेत्रया सः।
प्रोक्तं वचोऽतिकृपणं कृपणो निशम्य,
नेत्रे निमील्य सुचिरं रुचिरं बभाषे।।१७।।

इस प्रकार कुटुम्ब का भरण करने में असमर्थ, कुछ क्रोध और करुणा से युक्त दृष्टिवाली गृहिणी के दीन वचन सुनकर देर तक आंख मूंदकर सुदामा सुन्दर वचन बोले। ।।१७।।

स्वल्पाक्षरार्थनिरता सदलङ्कृतिस्ते,
श्रीव्यासदेवकवितेव पवित्रवाणी।
पूज्या पुमर्थकुसुमैः सुसमैर्मृगाक्षि,
नित्यं गृहस्थविषये वसता मयेयं।।१८।।

हे मृगनयनी! थोड़े शब्दों में बहुत (गम्भीर) अर्थों वाली, सत्य से अलंकृत, श्रीव्यासजी की कविता के समान तेरी पवित्र वाणी है।

गृहस्थी में रहते हुए मुझे नित्य चार पुरुषार्थ रूपी सुसमान पुष्पों से इस वाणी का पूजन करना चाहिए। ।।१८।।

सत्यं ब्रवीषि सुभगे मम दुर्भगस्य,
कान्तासि कञ्जवदना मदनालसा त्वम्।
योग्यासि भोक्तुमबले परमां समृद्धिं,
नार्हासि सोढुमिह सुन्दरि दुःखजालम्।।१९।।

हे सौभाग्यशालिनी! तू सत्य कहती है। यह मेरा दुर्भाग्य है कि कमल के समान मुख वाली, कामालसा तू मुझ अभागे की पत्नी है। हे अबले! तू परम समृद्धि को भोगने योग्य है, हे सुन्दरी! तू दुःखों को भोगने योग्य नहीं है। ।।१९।।

किञ्चेन्दुबिम्बवदने ललने गृहेशि,
धाता सृजज्जगदिदं विविधं पुरस्तात्।
वर्णाश्रमेतरगणस्य पृथक् स्वधर्मान्,
अस्मिन्परत्र च हितान् रचयाम्बभूव।।२०।।

किन्तु, चन्द्रमा के बिम्ब के समान सुन्दर मुख वाली हे गृहस्वामिनि! ब्रह्मा ने इस संसार का पूर्वकाल में सृजन करते हुए भिन्न-भिन्न समूहो के इस लोक और परलोक में हितकारी वर्ण आश्रम तथा विविध धर्मों की रचना की। ।।२०।।

तत्रादिशच्छतधृतिर्धरणीसुराणां,
धर्मञ्चतुर्भिरिति नो वदनैर्हितैषी।
संयच्छतेन्द्रियगणं भजतोञ्छवृत्तिं
कृष्णं कलंकरहितं स्मरत द्विजेन्द्राः ।।२१।।

तब हमारे हितैषी धृतिमान् ब्रह्मा ने अपने चारों मुखों से

भूदेव(ब्राह्मणों) के धर्मों को इस प्रकार बताया कि हे ब्राह्मणो! इन्द्रियों को वश में करो,उञ्छ वृत्ति को अपनाओ और कलंकरहित श्रीकृष्ण का स्मरण करो। ।।२१।।

इत्थं तपोदमयुतं दयिते विरक्तम्,
भक्तं भवाम्बुधिहरस्य परस्य पुंसः।
मां योजयस्यविरतं गृहकर्म्मणि त्वम्,
पार्श्वस्थिताऽपि न च वेत्सि मदीयभावम्।।२२।।

इस प्रकार तप और आत्मदमन में लगे हुए विरक्त तथा संसार-सागर से तारने वाले परमपुरुष श्रीकृष्ण की भक्ति में लीन मुझे तुम निरन्तर गृहकार्य में लगाये रखती हो। हे प्रिये! मेरे पास रह कर भी तुम मेरे भाव को नहीं समझ रही हो।।२२।।

मुग्धे विभूषणवरैर्न विभूषितापि,
चित्राम्बरैर्वरतनो न विचित्रितापि।
शुश्रूषयैव गजगामिनि मानसं मे,
नित्यं विमोहयसि मोहिनि चञ्चलाक्षि।।२३।।

हे प्रिये ! अच्छे आभूषणों को न पहने हुई भी तथा चित्र-विचित्र वस्त्रों को न धारण करती हुई भी, हे गजगामिनि! हे चंचल नेत्रों वाली! हे मोहिनी! तूने अपनी सेवा और अपने चंचल (स्वभाव से) मेरे मन को मोह लिया है। ।।२३।।

अस्मल्ललाटपटले विधिना व्यधायि,
रंकत्वमंकनविधौ सुधवे ध्रुवन्नु।
यस्माद्वयं निगमगा नयगा विधिज्ञाः,
प्राज्ञे कुटुम्बभरणे नहि पारयामः।।२४।।

ब्रह्मा जी ने हमारा भाग्य लिखते समय हमारे ललाट में दरिद्रता अंकित कर दी है। इस कारण हे बुद्धिमति! हम लोग वेद मार्ग का, नीति व विधि का पालन करते हुए भी परिवार का भरण नहीं कर पाते। ।।२४।।

निष्किञ्चनस्य पृथुकाः पृथुलोचनेऽमी,
क्षुद्व्याकुलाः कलरवा वसनैर्विहीनाः।
उत्प्लुत्य धूलिभरितास्त्वरितम्ममांके,
चेतो हरन्ति नितरां न यदा रमन्ते।।२५।।

हे बड़े-बड़े नेत्रों वाली! जिसके पास संसार में कुछ भी नहीं है, ऐसे मेरे ये बालक भूख-प्यास और वस्त्रहीनता से व्याकुल तथा धूल से धूसरित हो जल्दी ही हमारी गोद में आकर चित्त हरने लग जाते हैं। ।।२५।।

एवं यदूत्तमधनस्य यदृच्छया यत्,
लाभेन- तुष्टमनसो मम मानसज्ञे।
विज्ञे प्रवर्तयसि किं मृगतृष्णिकाम्भे,
गन्धर्वपत्तनसमे विषमे भवाब्धौ।।२६।।

यदुपति श्रीकृष्ण की यदृच्छा से प्राप्त वस्तुओं से ही सन्तुष्ट रहने वाले मेरे मन को जानने वाली हे बुद्धिमति! तू गन्धर्वपुरी के समान अवास्तविक, मृगतृष्णारूपी जल वाले भवसागर की ओर क्यों प्रवृत्त हो रही हो।।२६।।

कुर्याम् प्रयत्नमपि चेद्धनसञ्चयार्थम्,
दैवं विना कथमये पुरुषार्थसिद्धिः।
तद्दृष्टवत्यसि चिरान्मम तु व्यतीतं,

द्रष्टासि सम्प्रति भविष्यमपीह भद्रे।।२७।।

हे भद्रे! धन इकट्ठा करने का बहुत प्रयत्न करने पर भी भाग्यहीनता के कारण कार्य-सिद्धि कैसे हो सकती है। तुम बहुत समय से मेरा भूतकाल देखती और जानतीं हो। अब भविष्य को भी देख लोगी।।२७।।

अन्यच्च मे श्रृणु वचोऽस्मि सखा मुरारे-
र्लक्ष्मीपतेर्जनगतेर्जगदीश्वरस्य।
विख्याततीर्थयशसो वसुदेवजस्य,
दारिद्र्यदुःखदहनस्य सखिप्रियस्य।।२८।।

और भी मेरी बातों को सुनो कि सबके अन्दर निवास करने वाले लक्ष्मीपति जगदीश्वर मुरारि का मैं मित्र हूं। उनका यश संसार में विख्यात है। वे वसुदेव जी के पुत्र अपने प्रियजनों के प्रिय तथा उनकी दरिद्रता के दुःख को दूर करने वाले हैं। ।।२८।।

यो धर्मभूमिसुरवर्यगवां वरोरु,
गुप्त्यै सुरेतरचमूक्षपणाय साक्षात्।
अभ्यर्थितोऽर्थिसुरधेनुरजेन विष्णु,
राविर्बभूव भगवान्वसुदेवगेहे।।२९।।

हे सुन्दर जांघों वाली! देवता धर्म और गौओं की रक्षा तथा असुर सेना के विनाश के लिये देवता, गाय और ब्रह्मा की प्रार्थना को सुनकर ये साक्षात् भगवान विष्णु वसुदेव जी के घर अवतरित हुए हैं। ।।२९।।

योपूतनामगमयत्सुरलोकमीशो,

विद्वेषिणीं सखि सखा मम माधवोऽसौ।
अन्यांश्च कंससहितानहितान्सुराणाम्,
चाणूरतोशलशलानथमुष्टकादीन्।।३०।।

(जिन्होंने) द्वेष रखने वाली पूतना को मारा था हे सखि! वे ही माधव मेरे मित्र हैं। उन्होंने ही देवताओं का अहित करने वाले कंस सहित अन्य बहुत से अधर्मियों, चाणूर, तोशल, शल, मुष्टक आदि राक्षसों का वध किया। ।।३०।।

स द्वारकां मणिसुवर्णमयीं पुरीं स्वां,
सम्भूषयत्ययि सुभाषितभाषिणीशः।
सम्प्रत्यशेषसुरगीतपवित्रकीर्तिः,
स्त्रीपुत्रमित्रसहितः सति मे वयस्यः ।।३१।।

हे अच्छे वचन बोलने वाली! हे सती! वे अब सुन्दर सुवर्ण और मणियों से मण्डित अपनी नगरी द्वारिका को मित्र, स्त्री और पुत्रों के साथ रहते हुए सुशोभित करते हैं। देवता उनकी पवित्र कीर्ति का गान करते हैं। वे हमारे समान आयु के मित्र हैं।।३१।।

तन्निर्धनोत्तमधनं स्थिरमस्थिराक्षि,
निष्किञ्चने भज जनार्दनमाप्तकामं।
आराधितो हृदि हृषीकपतिः प्रियेऽसौ,
पूर्णान्करिष्यति समस्तमनोरथांस्ते।।३२।।

हे चंचल नेत्रों वाली! वे ही (भगवान श्रीकृष्ण) निर्धनों के उत्तम, स्थिर धन हैं। हे निर्धन! (उन) आप्तकाम जनार्दन का भजन कर। प्रिये ! उन इन्द्रियों के स्वामी (भगवान श्रीकृष्ण) की आराधना हृदय से करने पर वे प्रसन्न होकर तुम्हारी सभी कामनायें

पूर्ण करेंगे।।३२।।

यन्नामसंस्मरणमात्रमपीह लोके,
प्रेयस्यमंगलकलंकविंकारहारि।
रंकत्वमिच्छसि गतं यदि सुन्दरि त्वम्,
उच्चैस्तरां भगवतो रट नामधेयम् ।।३३।।

हे प्रिये! उनके नाम का स्मरण करना मात्र इस संसार में अमंगल तथा कलंक एवं समस्त विकारों का हरण करने वाला है। हे सुन्दरी! यदि निर्धनता को दूर करना चाहती हो तो उच्च स्वर से प्रभु का नाम रटो। ।।३३।।

श्रुत्वेति वाक्यममलं कमलानना सा,
भर्त्रा समीरितमुदारमुदारशीला।
ईषद्विहस्य वचनं रचनाविशेषं,
प्रोवाच मञ्जुलमलं ललना ललामं।।३४।।

पति के द्वारा यह पवित्र वाणी सुनकर कमलमुखी, उदार स्वभाव वाली वह स्त्री कुछ हंसकर मधुर रचना विशेष युक्त सुन्दर वाणी से बोली। ।।३५।।

सख्यं कदा नरवरेण गदाधरेण,
श्रीवत्सकौस्तुभसुदर्शनधारिणाऽभूत्।
कुंत्राधनस्य कुपटावृतरंकराज,
पीताम्बरेण मणिकुण्डलहारिणा ते।।३५।।

गदा, श्रीवत्स, कौस्तुभमणि तथा सुदर्शन चक्रधारी मनुष्यों में श्रेष्ठ भगवान श्रीकृष्ण से कब मित्रता हुई? कहां तो दरिद्रता रूपी पर्दे

से ढके आप और कहां पीताम्बर पट, मणि-कुण्डल, हार से सुशोभित भगवान।।३५।।

संस्मारितेश्वरकथ: सुकथो गृहिण्या,
वाष्पाकुल: पुलकितांगरुहस्तपस्वी।
स्वानन्दसंप्लवविलीनमना: सुदामा,
तूष्णीम्बभूव न च काञ्चिदुवाच वाचं।।३६।।

पत्नी द्वारा प्रभु की कथा याद दिलाने पर सुन्दर कथा करने वाले तपस्वी सुदामा जी प्रेम में रोमांचित-पुलकित होकर आंसू बहाते हुए, अपने आनन्द में लीन (विभोर) होकर चुप हो गए, कुछ भी बोल न सके। ।।३६।।

सञ्चितयंश्चिरतरं ललितानि तानि,
सान्दीपिनेर्द्विजवरात्पठता कृतानि।
कृष्णेन मानसहराणि विचेष्टितानि,
सालोक्यमाप्त इव संशुशुभे सुदामा।।३७।।

ब्राह्मण श्रेष्ठ सान्दीपिनि के पास पढ़ने के समय श्रीकृष्ण द्वारा किये गये उन मनोहर, ललित कार्यों का देर तक चिन्तन करते हुए सुदामा मोक्ष को प्राप्त व्यक्ति के समान शोभा पाने लगे।।३७।।

यद्योगिनो विषयभोगविरक्तचित्ता:,
कालेन दीर्घवयसा परिपक्वयोगा:।
प्राणान्निरुध्य हृदयेऽनुभवन्ति शर्म,
वाचामगोचरमवाप हरिप्रियोऽसौ।।३८।।

विषय-वासना भोग आदि से विरक्त चित्त होकर योगी लोग

बहुत समय में वाणी से अगोचर जिस कल्याण को हृदय में प्राण वायु को रोक कर प्राप्त करते हैं, उसे हरि के प्रिय उस सुदामा ने प्राप्त कर लिया।।३८।।

ध्यायन्मुकुन्दचरणं शरणं गतानां,
संसारसागरहरं कमलाविकाशं।
उच्चैः श्वसन्नयनयोर्जलमुत्सृजंश्च,
वाचं विचित्रधिषणोऽनुजगाद रम्यां।।३९।।

शरण में आये हुये लोगों के संसार सागर के कष्टों को हरण करने वाले, लक्ष्मीपति उन भगवान के चरणों का ध्यान करते हुए विचित्र बुद्धि वाले (सुदामा जी) ऊंचे-ऊंचे श्वास लेते हुये, नेत्रों से जल गिराते हुये, सुन्दर वाणी बोले।।३९।।

विद्यां यदा गुरुकुले पठितुं प्रियेऽहम्,
आवन्तिकां गुरुपुरीमगमं तदा हि।
अध्येतुमागमि पतत्पतिगामिनापि,
तत्रावयोर्निवसतोः प्रियता पराऽसीत्।।४०।।

हे प्रिये! गुरुकुल में विद्या पढ़ने हेतु जब मैं गुरुपुरी अवन्तिका गया था तभी पढ़ने के लिये गरुड़ की सवारी करने वाले भगवान भी वहां आये थे। वहां निवास करते हुए हमारा परस्पर बहुत प्रेम हो गया।।४०।।

एकासनासनसहाध्ययनाशनानि,
कर्माणि नन्दतनयेन समं ममासन्।
यानि स्मरन्ननुदिनं हृदयंगमानि,
सत्यं ममास्ति शिथिला व्यवहारवृत्तिः।।४१।।

एक ही आसन पर बैठते थे, एक साथ भोजन-अध्ययन करते

थे, नन्द के पुत्र के साथ उन हृदयंगम कार्यों को स्मरण करके, सत्य कहता हूं कि मेरी वृत्ति व्यवहार में शिथिल हो जाती है।।४१।।

अन्येऽपि छात्रनिवहा: कृतपुण्यपुञ्जा:,
सान्दीपिनेर्निखिलशास्त्रविदोऽपठन्स्म।
आनञ्च तानपि समान्समदृक् परन्तु,
प्रेमावधिं मयि चकार सुदामनीश:।।४२।।

अनेक पुण्यकर्मा दूसरे छात्र भी समस्त शास्त्रों को जानने वाले सान्दीपिनि गुरु से पढ़ा करते थे। समद्रष्टा भगवान उन्हें समान दृष्टि से स्नेह करते थे, किन्तु मुझ सुदामा पर प्रभु का परम प्रेम था।।४२।।

आसन्सुमंगलमयानि दिनानि तानि,
श्यामेन साकमबले गमितानि यानि।
हार्दम् ब्रवीमि श्रृणु सुन्दरि तं सखायं,
कृष्णं विना मम मुदे नहि किञ्चिदस्ति।।४३।।

हे अबले! भगवान के सहवास में बीते हुये वे दिन बहुत मंगलमय थे। हे सुन्दरि ! सुनो, मैं हृदय से कहता हूं कि मित्र श्रीकृष्ण के बिना (मुझे) कोई प्रसन्नता नहीं है।।४३।।

पद्मापते: प्रियतमो द्विज एष पुण्यो,
लोके जनश्रुतिमियेष ममेतिवाद:।
एतेन मंगलवरेण वयं कृतार्था,
मन्यामहे जगदिदं तृणवत्समस्तम्।।४४।।

'लक्ष्मीपति का प्रियतम यह पुण्यात्मा ब्राह्मण है,' यह जनश्रुति

लोक में हो गई थीं। मैं ऐसे मंगलप्रद भगवान के द्वारा कृतार्थ किया गया हूं। इसके अतिरिक्त मैं संसार को तृण-समान समझता हूं।।४४।।

श्रुत्वेरितं निजधवेन वचो वरेण्यं,
श्रीदामवामदयिता दयितं तमाह।
धन्योऽसि मान्यतम पूज्यतमश्च यस्य,
साक्षात्सखा नरहरिस्तव चक्रपाणि:।।४५।।

अपने पति सुदामा के द्वारा ऐसी उत्तम वाणी सुनकर (उनकी) प्रिय पत्नी बोली-'आप धन्य हैं जो सबके पूज्य, मान्य, साक्षात् भगवान चक्रपाणि आपके मित्र हैं।' ।।४५।।

योऽवीवृधद् द्रुपदजापरिधानवस्त्रं,
योऽमूमुचद् गजपतिं झषराजपाशात्।
गर्भे ररक्ष कुरुपाण्डववंशबीजं,
सोऽयं सखा किमथवा तव कोऽपि चाढ्य:।।४६।।

जिसने द्रौपदी के चीरहरण के समय वस्त्र बढ़ाया था, जिसने ग्राह के मुख से गजराज को बचाया था, पाण्डवों के वंश की रक्षा गर्भ में की थी- वे ही श्रीकृष्ण आपके सखा हैं अथवा कोई और हैं? ।।४६।।

हंहो कथं मम सुहृत्तवदृष्टपूर्वो,
जानास्यहो कथममुं गृहसंस्थिता त्वं।
व्याजीगणस्त्वमबलाऽस्य गुणान्समग्रान्,
यद्गायनेऽपि मुनयो नहि यान्ति पारं।।४७।।

(सुदामा जी ने पूछा) अरे! क्या मेरे मित्र को तुमने पहले

कभी देखा है? घर में रहत हुए भी तुम उन्हें कैसे जानती हो? तुमने अबला होते हुए उनके समस्त गुणों की गणना कर दी है जिन का मुनि भी पार नहीं पा सकते।।४७।।

बाल्ये मया निजपितुर्वचनाच्छ्रुतानि,
तच्छात्रवर्गवदनादपि संश्रुतानि।
कर्माण्यसीमसुखदानि महत्तमस्य,
त्वद्वक्त्रकञ्जनिसृतान्यधुना श्रृणोमि।।४८।।

(पत्नी बोली) असीम सुख देने वाले उन महत्तम(कृष्ण) के कर्मों को बचपन में मैंने अपने पिता के मुख से सुना है और उनके छात्र वर्ग के मुख से भी सुनी हूं और अब आप के मुखकमल से इस समय सुन रही हूं।।४८।।

यद्यस्ति ते प्रियसुहृद्द्विजदेवदेव-
स्तीर्थश्रवा: श्रमणगीतकथ: कथञ्चित्।
द्रष्टुं व्रजाद्य दयितं यदुपत्तनं तं,
यद्दर्शनेन विपदो विमुखीभवन्ति।।४९।।

हे पतिदेव! यदि आप के प्रिय ब्राह्मणों के देव भगवान हैं, तीर्थों में भी जिनकी कथा मंगलमय है, साधुओं में जिनका कथन किया जाता है, तो उन प्रिय मित्र को देखने के लिए आप आज ही द्वारिका जायें। जिनके दर्शन से ही समस्त विपत्तियां दूर हो जाती हैं।।४९।।

यो ब्राह्मणाय विदुषे शमतत्पराय,
सीदत्कुटुम्बबहुलाय भवद्विधायं।
ग्रामान्गृहाणि मणिहेममयानि तूर्णम्,
पूर्णो ददाति ददतां प्रवरो महात्मा।।५०।।

देने वालों में श्रेष्ठ वे पूर्ण प्रभु, आचार-विचार युक्त, शम-दम का पालन करने वाले, अत्यंत बड़े और दु:खी परिवार वाले आप जैसे ब्राह्मण को ग्राम, गृह, मणि, सुवर्ण आदि से युक्त गृह शीघ्र ही दे देंगे।।५०।।

तं ब्राह्मणप्रियमनन्तमपारशक्तिं,
श्रीवत्सवक्षसमलं ललितं त्रिलोक्याम्।
बर्हावतंसमतसीकुसुमावभासं,
सद्भक्तवत्सलममुं शरणं प्रयाहि।।५१।।

उन ब्राह्मणप्रिय, अनंत-अपार शक्ति संपन्न, श्रीवत्स यंत्र से सुशोभित वक्षस्थल वाले, तीनों लोकों में श्रेष्ठ, सुन्दर मोर पंख धारण करने वाले, अलसी के फूल सदृश रंग वाले, भक्तवत्सल भगवान की शरण में जाइये।।५१।।

त्वामागतं निजगृहेऽतिथिमातिथेय:,
पूज्यं चिरान्नयनगोचरमिष्टबन्धुम्।
दृष्ट्वैव हृष्टहृदय: सहसोत्थित: सन्,
धावन्द्रुतं तव समीपमुपैष्यतीश:।।५२।।

अतिथि सेवा करने वाले वे प्रभु अपने घर में अतिथि रूप में आये, पूज्य, चिरकाल पश्चात् दिखे प्रिय बन्धु को देखते ही प्रसन्न हृदय होकर तत्काल उठकर दौड़ते हुये आपके पास आवेंगे।।५२।।

सम्पूजयिष्यति सुरैरपि पूजनीयो,
नारायणो नरसखोऽखिलसत्त्वराशि:।
स्नेहेन दीर्घसमयेन गृहागतं त्वां,

दामोदरो निजसखं सुमुखं सुखात्मा।।५३।।

देवताओं के पूज्य, नरसखा, सम्पूर्ण प्राणियों के अधिष्ठान, सुखात्मा भगवान दामोदर नारायण स्नेहपूर्वक बहुत दिनों के बाद घर आने पर अपने मित्र आपकी अत्यधिक स्नेह से पूजा करेंगे।।५३।।

यद्यत्त्वमिच्छसि गृहं विपुलं धनं वा,
तत्तत्प्रदास्यति ततोऽधिकदो वदान्यः।
पात्राय तुभ्यमबलादिमते द्विजाय,
सख्ये हिताय निरताय तदीयदास्ये।।५४।।

आपकी जो-जो इच्छा होगी-घर या विपुल धन वह सब तथा उससे भी अधिक वे आप जैसे पत्नी-पुत्र वाले ब्राह्मण, पात्र, मित्र के हितकारी, उनकी दासता में लीन पुरुष को वे देंगे।।५४।।

नो चेद् गमिष्यसि भविष्यति सुप्रभाते,
संयाचितुं भगवतो द्रविणं गृहं वा।
मां त्वं स्मरिष्यसि गतां परलोकमद्य,
धिग्जीवनं धनविभोगविहीनमत्र।।५५।।

प्रातः होते ही भगवान से धन और घर माँगने के लिये यदि आप नहीं जाएंगे तो परलोक में गई मुझे याद करते रहेंगे। इस लोक में धन और भोग विहीन जीवन को धिक्कार है।।५५।।

इत्याग्रहेण निजवल्लभयेरितः सः,
कृष्णप्रियः स्ववनितामिदमाजगाद।
कल्याण्युपायनमपि प्रभवे प्रदेयं,
वस्त्रे बधान मम पुस्तकमासनञ्च।।५६।।

पत्नी द्वारा इतना आग्रह करने पर श्री कृष्ण के सखा उस से बोले- हे कल्याणि ! भगवान के लिये भेंट देने योग्य कुछ वस्तु, हमारी पुस्तक और आसन वस्त्र में बांध दो।' ।।५६।।

सा सुन्दरी निजगृहान्तिकभूमिदेवा-
दादाय तण्डुलकणान्प्रसृतिप्रमाणान् ।
चैले निबध्य सुदृढं निजनायकाय,
प्रातः प्रयाणनियताय ददौ हितेन।।५७।।

प्रात:काल उस सुन्दरी ने अपने घर के पड़ोसी ब्राह्मण से मुट्ठी भर चावल के टुकड़े लाकर एक कपड़े में मजबूत बाँधकर सवेरे जाने का निश्चय किए हुए अपने पति को दे दिया। ।।५७।।

सा शर्वरी कथयतोः पलकार्धवत्तां,
वार्तां जनार्तिहरणस्य मुदा व्यतीता।
कल्ये चचाल ललनाकृतमंगलोऽसौ,
श्रीद्वारकां हरिपुरीं मिलितुं सखायम्।।५८।।

वह रात्रि लोगों के कष्टों को दूर करने वाले भगवान की वार्त्ता में ही आधे पल के समान आनंद से व्यतीत हो गयी। प्रात:काल पत्नी के द्वारा मंगल कार्य किए हुए सुदामा अपने मित्र को मिलने के लिए भगवान की नगरी द्वारिकापुरी को चले। ।।५८।।

पुंस्कोकिलः स्वपिकया प्रियया समेतो,
दक्षे चुकूज सहकारतरौ निषण्णः ।
वामे शिखी तमनु कीरवरो व्रजन्तं ,
कन्या जगाम च पतंगकरः समक्षे।।५९।।

पुंस्कोकिल अपनी मधुर आवाज में दाहिनी ओर के आम्र वृक्ष पर

बैठा हुआ अपनी कोकिला के साथ कूज रहा था। बायीं ओर मोर, उसके पीछे तोता, सामने कन्याएं तथा सूर्य की किरणें, जाते हुए सुदामा के पीछे आ रही थीं। ।।५९।।

एवं शुभानि शकुनानि विलोक्य विद्वान्,
पद्भ्यां व्रजन् व्रजपतेर्वृजिनापहानि।
गायन्स्मरन्नथ पठंश्चरितानि सख्यु-
र्नाना मनोरथशतानि ततान चित्ते।।६०।।

इस प्रकार के शुभ शकुनों को देखते हुये, पैरों से चलते हुये, पापों को दूर करने वाले भगवान के गुणों को गाते हुये, अपने मित्र के चरित्रों को पढ़ते हुये विद्वान(सुदामा) अनेक मनोरथ अपने चित्त में भरने लगे।।६०।।

प्रस्पंदते प्रतिपलं मम दक्षचक्षुः,
वामेतरः स्फुरति चाद्य शुभो ममांसः।
उत्कण्ठते मम मनो न च मे श्रमोऽस्ति,
नूनं भविष्यति मुकुन्दसमागमो मे।।६१।।

हर समय मेरी दाहिनी आँख और दाहिना कंधा फड़क रहा है। मन में उत्कण्ठा हो रही है। चलने में परिश्रम नहीं मालूम पड़ता। निश्चय ही भगवान के शीघ्र दर्शन होगें।

किं पूर्वजन्मनि कृतं सुकृतं मयाहो,
किंवा तपोऽतपि परं धनमप्यदायि।
किं वा मुरारिचरणार्चनमत्यकारि,
श्रीकृष्णदर्शनमिदं कथमन्यथा मे।।६२।।

(सुदामा जी सोचते हैं कि) मैंने पिछले जन्म में कौन सा अच्छा कर्म किया था, कौन सा तप किया था, परम धन दिया था? श्रीकृष्ण के चरण की अति पूजा की थी? नहीं तो भगवान के दर्शन कैसे होते?।।६२।।

यद्दर्शनार्थमवनीपतयोऽपि राज्यं,
प्राज्यं ज़हुस्तृणमिवर्षिगणाश्च सिद्धाः।
श्रद्धातपोदमयुता विरता महान्तः,
सन्तो वनं निविविशुस्तदु मेऽद्य भावि।।६३।।

जिनके दर्शन के लिए भूपति राज्यों को तृण की तरह त्याग कर, ऋणिगण-सिद्ध श्रद्धा एवं तप से युक्त होकर, महात्मा और सन्त विरक्तिपूर्वक जंगलों में निवास करते हैं, उनके दर्शन आज मुझे होंगे।६३।।

त्रेधापि जन्म सफलं भविता ममाद्य,
विद्या गुरोरधिगतापि फलिष्यतीयम्।
धन्या ममाद्य जननी जनकश्च धन्यो,
धन्योऽहमाशु भवितास्मि निरीक्ष्य कृष्णम्।।६४।।

तीन प्रकार से आज मेरा जन्म सफल होने वाला है- गुरु से प्राप्त विद्या फलवती होगी, आज मेरे माता-पिता धन्य हो गये और शीघ्र ही श्रीकृष्ण का दर्शन करके मैं भी धन्य होने वाला हूँ।।६४।।

मां ज्ञास्यते कथमसौ चिरतोऽद्य दृष्टम्,
ज्ञात्वा च वक्ष्यति सखे कुशलं तवेति।
प्रेम्णोरसा दृढतरं परिरप्स्यते माम्,

एकासने सह मया विहरिष्यतीशः।।६५।।

चिरकाल के पश्चात् दिखाई दिये मुझे वह कैसे पहचानेंगे? पहचान कर कहेंगे- हे मित्र! कुशलपूर्वक तो हो ना? प्रेमपूर्वक कस कर छाती से लगा लेंगे और वह स्वामी मेरे साथ एकासन पर बैठेंगे।।६५।।

एवं मनोरथकदम्बरथाधिरूढो,
विश्वेश्वरस्य परमो हृदयंगमः सः।
कृष्णस्य विश्वजयिनो नगरीमवाप,
दिव्यां विचित्ररचनारचितां विशालाम्।।६६।।

इस प्रकार मनोरथों के रथ पर चढ़े हुए, विश्वेश्वर के परम हृदयस्थ वह सुदामा विश्वविजयी कृष्ण की दिव्य, विचित्र रचनायुक्त विशाल नगरी में पहुँचे।।६६।।

सा यादवेन्द्रनगरीन्द्रपुरीव रम्या,
प्रासादहर्म्यमणिचत्वरमञ्जुवीथी।
प्राकारगोपुरतटागसमाजकूपा,
स्वारामकुञ्जभवनोपवनातिधन्या।।६७।।

इन्द्र पुरी जैसी यदुराज की वह सुन्दर नगरी महलों, स्वर्ण, मणियों, चौपालों से सजी हुई गलियों वाली, प्राकारों, गोपुरों, तालाबों, कुंओं, बगीचों, कुञ्जों और भवनों से युक्त अति धन्य थी।।६७।।

यस्यां वसन्ति यदवः कृतपुण्यपुञ्जाः,
सर्वेऽपि देववपुषो धनिनो युवानः।
धीरा गभीरवचना रणसम्मुखीना,

हीनक्रियासु विमुखाः सुमुखाः सुखज्ञाः ।।६८।।

जिस नगरी में अनेक पुण्यकर्मा, देवताओं जैसे शरीरवाले, धनी, युवक, गम्भीर वचनों वाले, रण में शत्रुओं का सामना करने वाले, तुच्छ क्रियाओं से विमुख, सुन्दर मुखवाले, सुखों को जानने वाले यदुवंशी निवास करते हैं।।६८।।

एवंविधां हरिपुरीमभिवीक्ष्य विद्वान्,
द्रष्टुं समुत्सुकमनाः प्रभुपादपद्मं।
पप्रच्छ नागरकुमारगणं मुदेति,
हें वत्सका कथयत क्व मुरारिसद्म।।६९।।

इस प्रकार की हरि की पुरी को चारों ओर से देखकर प्रभु के चरण कमलों के सम्बन्ध में पूछने को उत्सुक होकर नगर के कुमारों को आनंद से पूछने लगे-'हे बेटो! बताओ कि मुरारि का घर कहां है?'।।६९।।

आकर्ण्य कर्णहरणीं हरिभृत्यवाणीं,
ते बालका इति तमूचुरुपास्यमानाः।
ब्रह्मन्भवन्तमधुनैव हरिन्नयामः,
पूर्वम्पुनीहि भगवन् द्विज नो गृहाणि।।७०।।

हरि के सेवक की कानों को भाने वाली वाणी सुनकर वे बालक उनकी उपासना करते हुए बोले-हे भगवन्! आपको अभी भगवान के पास ले चलते हैं। हे ब्राह्मणदेव! पहले हमारे घरों को पवित्र कीजिए।

ते तं प्रदर्श्य भवनानि निजानि मान्य-

मत्यादरेण च पुरीमपि दर्शयन्तः।
हर्म्याणि षोडशसहस्रमितानि भर्त्तु,
रुद्दिश्य विप्रमथ तत्र विजह्रुरारात्।।७१।।

उस माननीय को अपने भवन दिखाकर और अति आदर से नगरी को भी दिखाते हुए, वे स्वामी के सोलह सहस्र महलों को उस ब्राह्मण को दिखाकर, गायब हो गए।।

तान्यद्भुतानि मणिहेममयानि विष्णो-
रुद्दामधामनिकराणि वराणि पश्यन्।
कस्मिन्भविष्यति गृहे न भविष्यतीति,
सञ्चिन्त्य चैकनिलयं शनकैर्विवेश।।७२।।

भगवान विष्णु के उन मणियों और स्वर्णमय अत्यन्त अद्भुत श्रेष्ठ धामों के समूह को देखते हुए वे,' किस घर में प्रभु होंगे? पता नहीं होंगे भी या नहीं?' यह सोचते हुए एक घर में धीरे से प्रविष्ट हो गए।।७२।।

तत्रेन्दुकुन्ददरगौरवरे गृहेन्तः,
सिंहासने मणिमये स्थितमात्ममित्रम्।
पीताम्बरैर्मुकुटकुण्डलकंकणैश्च,
दृष्ट्वा विभूषितमवाप परां मुदम् सः।।७३।।

वहां चंद्रमा और कुन्द पुष्प के समान गौर वर्ण घर के अन्दर मणिमय सिंहासन पर स्थित, पीताम्बर, मुकुट, कुण्डल और कंकणों से सुशोभित अपने मित्र को देखकर वे परमानंद को प्राप्त हुए।।७३।।

शांतं शिवेतरहरं शरणागतानां,
कान्तं किशोरवयसं सुषमापयोधिम् ।
चन्द्राननं वनजनेत्रमुदारहासं,
लक्ष्मीनिवासमलकावृतसत्कपोलम् । ।७४ । ।

वहां शान्तरूप, शरणागतों के अमंगलों को हरने वाले, सुन्दर, किशोरावस्था के, सौन्दर्य के सागर, चन्द्र जैसे मुख वाले, कमल के समान नेत्र वाले, उदार हास्य वाले, लक्ष्मी-निवास, अलकों से ढकी हुई सुन्दर गालों वाले- । ।७४ । ।

मत्तालिपुञ्जकलगुञ्जितवन्यमाला,
विभ्राजमानमुरसि द्विजपादचिन्हम् ।
देवाधिदेवनरकिन्नरगीतकीर्तिम्,
भक्तार्तिभञ्जनमजं जनकल्पवृक्षम् । ।७५ । ।

मस्त भंवरों के गुञ्जार से युक्त वनमाला पहने हुए, छाती पर ब्राह्मण (भृगु) के पांव का चिन्ह धारण किए हुए, देवाधिदेवों, नरों तथा किन्नरों से कीर्तिगान किए जाते हुए, भक्तों के दुःख को दूर करने वाले, अजन्मा, जन-जन के लिए कल्पवृक्ष के समान- । ।७५ । ।

फुल्लारविन्दनयनं मणिकुण्डलाढ्यं,
कण्ठस्थकौस्तुभमणिं हरिमब्जनाभम् ।
भाले विशालतिलकं तिलकं यदूनां,
कीरास्यनासिकमुपासकदुःखनाशम् । ।७६ । ।

खिले कमल के समान नयनों वाले, मणिकुण्डलों से युक्त, गले में कौस्तुभ मणि धारण किए हुए, कमलनाभ, मस्तक पर विशाल तिलक लगाए हुए, तोते की चोंच के समान नासिका वाले,

उपासकों के दुःखों को नष्ट करने वाले, यदुकुल के तिलक प्रभु को-।।७६।।

आजानुलम्बितभुजं विशदोरुजंघं,
पञ्चास्यमध्यमुरुवक्षसमम्बुदाभम्।
राजाधिराजसुरराजसुपूजितांघ्रिम्,
पुण्यातिपुण्यमहिमानममानमोहम्।।७७।।

घुटनों तक लम्बी भुजाओं वाले, विशाल घुटनों और जांघों वाले, सिंह के मध्य भाग के समान जांघों और वक्षस्थल वाले, मेघवर्ण, राजाधिराज और देवराज द्वारा पूजित चरणों वाले, अति पवित्र महिमा वाले, अभिमान और मोह से रहित-।।७७।।

ध्यायन्ति यं मनसि योगरता मुनीन्द्रा,
गायन्ति यं निगमशास्त्रविदो विदग्धाः।
शेषोऽप्यशेषवदनैर्गणयन्गुणांश्च,
यस्य प्रयाति नहि पारमपारकीर्तेः।।७८।।

योगलीन मुनिराज जिनका मन में ध्यान करते हैं, वेदशास्त्रों के ज्ञाता विद्वान जिनका गान करते हैं, सम्पूर्ण मुखों से उनके गुणों को गाते हुए भी शेषनाग जिन आपारकीर्ति का पार नहीं पा सकते।।७८।।

कृष्णोपि नित्यविहितानि विधाय कर्मा-
ण्याज्ये समीक्ष्य मुखमात्मसखं समक्षे।
ब्राह्म्या श्रिया परमयाऽतिपरिष्कृतं तं,
द्वारीव चित्रलिखितं नितरान्ददर्श।।७९।।

कृष्ण ने भी नित्य कर्मों को निपटाकर, घी में अपना मुख देखकर, अपने सामने ब्राह्मी शोभा से परम परिष्कृत अपने उस मित्र

को दरवाजे पर चित्रलिखित सा अच्छी तरह देखा।।७९।।

भस्मावगुण्ठितललाटमथाक्षमालां,
कण्ठे दधानमतिदीर्घजटा वहन्तम्।
पीतोपवीतपरिवीतमुरोविशालं,
गंगाधरस्य महिमानमिवाहरन्तम्।।८०।।

मस्तक पर भस्म धारण किए हुए, गले में रुद्राक्ष की माला पहने हुए, अति दीर्घ जटा बढ़ाए हुए, पीला यज्ञोपवीत विशाल छाती पर धारण किए हुए, शंकर की महिमा को मानो धारण करते हुए-।।८०।।

विद्यातपोदमसमाधिशमादिसम्पत्,
साम्यादिसद्गुणयुतं गतदम्भदर्पम्।
तीव्रानुरागकलयोत्पुलकं कृशांगं,
प्रेमस्रुताश्रुनिकरं हरिभक्तिमूर्तिम्।।८१।।

विद्या, तप, आत्मदमन, समाधि और शांति आदि की सम्पत्ति वाले, समता आदि सद्गुणों से युक्त, दम्भ और अभिमान से रहित तीव्र अनुराग के कारण रोमांचित, दुर्बल अंगों वाले, प्रेम से आंसू बहाते हुए, हरि भक्ति के साक्षात् स्वरूप-।।८१।।

मित्रं सखेति नितरां मम किं सुदामा,
तारस्वरेण कथयन्मुहुरच्युतोऽपि।
त्यक्त्वासनं युवतिभिः सह धावमानः,
शीघ्रं प्रसारितभुजो द्विजमालिलिंग।।८२।।

मित्र को 'क्या यह मेरा मित्र सुदामा ही है?' ऐसा उच्च स्वर से कहते हुए कृष्ण ने भी आसन को त्याग कर अपनी पत्नियों के साथ

दौड़ते हुए जल्दी से भुजाएं फैलाकर उस ब्राह्मण सुदामा को गले लगा लिया।।८२।।

गाढं निपीड्य हृदयेन तदीयदेहं,
हस्तेन हस्तमवलम्ब्य निजस्य सख्युः।
तं स्वागतेन वचसा पुनरर्चयन्सः,
शय्यां निनाय नयवित्सह नायिकाभिः।।८३।

उस के देह को हृदय से कस के दबा कर, अपने मित्र के हाथ को हाथ में ले कर, स्वागत-वचनों से फिर उन की पूजा करते हुए अपनी पत्नियों सहित वे नीतिज्ञ उन्हें अपनी शैया पर ले गये।।८३।।

तल्पस्थमेनमपि मित्र सखेति विद्वन्,
ब्रह्मन्सहोदर वयस्य यशस्य साधो।
प्रेम्णा ब्रुवन्परिमृजंश्च तदीयपाद-
रेणुं स्वकीयवसनेन जहर्ष विष्णुः।।८४।।

बिस्तर पर स्थित उन्हें 'हे मित्र, सखे, विद्वन, सहोदर, वयस्य, यशस्वी, साधो आदि प्रेमपूर्वक बोलते हुए विष्णु उन के पांवों की धूलि को अपने वस्त्र से साफ करते हुए प्रसन्न हुए।।८४।।

रुक्मिण्युपानय जलं द्विजपादशुद्ध्यै,
त्वं लक्ष्मणेऽर्घ्यमपि चाचमनीयमत्र।
कालिन्दि वीजय सति व्यजनेन सत्ये,
त्वञ्चामरेण परिपूजय मित्रविन्दे।।८५।।

हे रुक्मिणि! तुम ब्राह्मण के पांवों को साफ करने के लिये जल लाओ,हे लक्ष्मणे! तुम अर्घ्य और आचमनीय यहां लाओ, हे कालिन्दि! तुम पंखा करो, हे सत्ये! तुम चंवर डुलाओ, हे मित्रविन्दे! तुम पूजन

करो ।।८५।।

त्वं साम्बमातरमुमाशु सुगन्धितैले-
नामर्दयामुमबले हिमवारिणा च।
संस्नापय प्रमुदितास्य जटा विमुञ्च,
श्यामे कुरंगनयने गजगामिनि त्वम्।।८६।।

हे साम्बमाता! तुम सुगन्धित तेल इन्हें मलो, ठंडे जल से स्नान कराओ, प्रसन्न भाव से इनकी जटाएं छुड़ाओ, हे श्यामे,हिरण जैसी आंखों वाली, हे गजगामिनि!।।८६।।

राज्ञ्यश्चिरागतममुं द्विजदेवमेतं,
शुश्रूषया मम सखायममार्यमीड्यम्।
या सेवनेऽस्य विमुखी भवतीष्वभाग्या,
सा मे प्रिया नहि भविष्यति सत्यमेतत्।।८७।।

हे रानियो! चिरकाल पश्चात् आये, मेरे सखा, पूज्य इन ब्राह्मणदेवता की सेवा करो। जो अभागिन इन की सेवा से विमुख होगी वह मेरी भी प्रिया नहीं रहेगी यह मैं सत्य कहता हूँ।।८७।।

भूदेवमर्चत सुताः सह दारवर्गै,
र्जानीत मे गुरुसहोदरमत्युदारम्।
एतेन साकमबलास्तनुजा मया प्राग्,
हर्षादपाठि गुरुतो गुरुवेदराशिः।।८८।।

हे पुत्रो! अपनी स्त्री-वर्ग सहित इन भूदेव(ब्राह्मण) की पूजा करो। मेरे इन अत्यन्त उदार गुरुकुल के सगे भाई को जान लो। हे पत्नियो-पुत्रो! इनके साथ ही मैंने पहले गुरु से विशाल वेदराशि को पढ़ा

था।।८८।।

संयोज्य पूजनविधौ सुतदारवृन्दान्,
स्वे स्वे समर्चनविधौ प्रवणाश्च तेऽपि।
अंके निधाय चरणौ पृथिवीसुरस्य,
मार्गश्रमापनयनाय हरिर्ममर्द।।८९।।

हरि ने अपने पुत्र और स्त्री-समूह को पूजन-विधि मं लगा दिया। वे भी अपनी-अपनी पूजन विधि में निपुण थे। उन पृथ्वी के देवता(ब्राह्मण) के चरणों को गोदी में रखकर हरि ने मार्ग की थकावट को दूर करने के लिये उन्हें मला।।८९।।

काश्चिज्जटाः कमलपाणिभिरादरेण,
स्वामूमुचन्कनकवर्तिकया महिष्यः।
तैलं ममर्दुरपराः सुरभि द्विजस्य,
चान्या निमज्जयितुमेनमवापुरद्भिः।।९०।।

कुछ रानियों ने अपने कमल-कोमल करों में सोने की सलाइयां लेकर जटाओं को छुड़ाया, अन्यों ने सुगन्धित तेल मला, और दूसरियों ने स्नान के लिये जल पहुंचाया।।९०।।

काश्चन विभूषणवराणि परार्घ्यवस्त्रा-
ण्यादाय चेष्टसुरभीणि विलेपनानि।
माल्यानि मौक्तिकमयानि च कौसुमानि,
रामा रमाप्रियसखं व्यतरन्समग्राः।।९१।।

कुछ ने श्रेष्ठ गहनों तथा परम मूल्यवान वस्त्रों ,सुगन्धित विलेपनों, मोतियों तथा फूलों की मालाओं को ला कर भगवान के प्रिय

सखा को अर्पण कर दिया।।९१।।

सख्युर्मुनेर्विधिवदात्मकलत्रपुत्रैः,
श्रद्धानुरागपरिपूर्णमनोभिरद्धा।
शुश्रूषणं स भगवानिति कारयित्वा,
व्यानञ्च तं स्वयमपि प्रथितोपचारैः।।९२।।

श्रद्धा और अनुराग से पूर्ण मन वाले अपने स्त्री-पुत्रों द्वारा उन सखा और मुनि की विधिवत् सेवा करवा कर भगवान ने स्वयं भी प्रसिद्ध उपचारों से उन की पूजा की।।९२।।

प्रक्षाल्य पादजलजावतिथेः स कृष्णः,
शुद्धोदकेन तदपोऽनुदधार मूर्ध्नि।
दारात्मजप्रभृतिभिः सह च स्वगेहे,
स्नेहार्द्रकञ्जनयनः शिथिलांगयष्टिः।।९३।।

अतिथि के चरण-कमलों को शुद्धजल से धो कर स्नेह से आर्द्र, शिथिल अंग वाले कमलनयन श्रीकृष्ण ने अपने घर में स्त्री-पुत्रों सहित उस जल को मस्तक पर धारण किया।।९३।।

तं धूपदीपहरिचन्दनपुष्पहारैः,
स्वात्मात्मजात्मगृहदारसमर्पणैश्च।
सम्पूज्य पूज्यतम पूज्यपदारविन्दो,
ब्रह्मण्यदेव इति नाम चकार सत्यम्।।९४।।

धूप, दीप, हरिचंदन पुष्पहारों से तथा अपने पुत्र, स्त्रियों का समर्पण करते हुए स्वयमात्मा, कृष्ण ने उन पूज्यतम के चरणकमलों की पूजा कर 'ब्रह्मण्यदेव' इस नाम को सत्य सिद्ध कर दिया।।९४।।

सम्भोज्य तं रसरसान्नमसौ चतुर्धा,
संभुज्य च स्वयमपि प्रभविष्णुरीड्यः।
तेन स्वसज्जनजनेन जनार्तिहारी,
शय्यां रुरोह मणिकुट्टिमधामनीशः।।९५।।

उन्हें चतुर्धा सरस भोजन करवा कर और स्वयं भी भोजन करके प्रभावशाली, पूज्य, जन-कष्ट-निवारक श्री कृष्ण उन अपने मित्र के साथ मणिमय महल में शैया पर स्थित हो गये।।९५।।

ताम्बूलभूषितमुखौ कृतपुण्यपुञ्जौ,
वैकासनौ सितसितेतरशुद्धवर्णौ।
श्रीरामलक्ष्मणयुगस्य परामभिख्या-
माजह्रतुर्द्विजयदुप्रवरौ सखायौ।।९६।।

पान से शोभित मुख वाले, अनेक पुण्य करने वाले, एकासन पर स्थित, श्वेत-श्याम वर्ण वाले उन द्विजवर और यदुवर मित्रों ने मानों श्रीराम-लक्ष्मण-युगल की परम प्रसिद्धि को छीन लिया।।९६।।

कच्चित्समाप्य निगमान्भवता विवाहः,
सम्यक्कृतो गुणवती रमणी तवास्ति।
पुत्रा वशे कुशलिनी तव जीविका किं,
वेदत्रयीं पठसि पाठयसीह विप्रान्।।९७।।

(श्रीकृष्ण सुदामा से पूछने लगे) क्या आपने शास्त्रों का अध्ययन समाप्त करके अच्छी विधि से विवाह कर लिया है? आपकी पत्नी गुणवती है ना? पुत्र वश में हैं? जीविका कुशलपूर्वक है? तीनों वेदों का पठन-पाठन चल रहा है ना?।।९७।।

भ्रात: कृता मयि कृपा महती त्वयाहो,
भाग्येन दर्शनमिदं तव शर्मदं मे।
आसीच्चिराय मनसो मम वासनेयं,
त्वत्पूजने भगवता सफलीकृताद्य।।९८।।

हे भाई! तुमने मुझ पर बड़ी कृपा की है। भाग्य से ही तुम्हारा कल्याणकारी दर्शन प्राप्त हुआ है। मेरे मन में बहुत देर से ऐसी इच्छा थी। तुम्हारे पूजन के रूप में भगवान ने आज वह सफल कर दी है।।९८।।

त्वत्पादतीर्थपयसाद्य पवित्रदेहो,
जातोऽस्म्यहं जगति दिष्टवतां वरिष्ठ:।
यस्योपरि प्रभुरसौ दययेत्पुरारि-
स्तं तर्हि संगमयते भवहा भवत्सु।।९९।।

तुम्हारे चरण-तीर्थ के जल से पवित्र देह वाला होकर आज मैं भाग्यशालियों में श्रेष्ठ हो गया हूँ। जिस पर वे प्रभु शंकर विशेष दया करें उसी को संसार से मुक्त करने वाले वे आप लोगों का संगम प्राप्त करवाते हैं।।९९।।

कच्चित्स्मरस्यपि मया सह नातिदीर्घ-
माचार्यधामनि कृतं सुखवासमंग।
विद्यार्थिनोऽतिनिपुणांश्च कुशाग्रबुद्धीन्,
सान्दीपिनं गुरुवरं गुरुमातरञ्च।।१००।।

क्या कभी गुरु-गृह में मेरे साथ हुए थोड़े समय के सुखद निवास का स्मरण करते हो? अतिनिपुण, तीव्र बुद्धि वाले विद्यार्थियों, गुरुवर सान्दीपनि और गुरुमाता का क्या कभी स्मरण आता है?।।१००।।

कालः सुमंगलमयः स बभूव भद्र,
योऽवन्तिकाख्यनगरे गमितः सुखेन।
सम्प्रत्यमुष्य गहनस्य गृहस्थसिन्धोः,
पारं समृद्धविभवाः अपि नैव यामः।।१०१।।

अवन्तिका नामक नगर में हमने जो सुख से बिताया था वह समय बड़ा मंगलमय था। अब समूचे वैभव वाले होने पर भी हम इस गहन गृहस्थ-सागर के पार जा नहीं सकते।।१०१।।

मित्राधुनापि महती मम भावनेयं,
श्रीविश्वनाथनगरे निवसेयमाशु।
किन्तूग्रगेहवनितातनुजादिपाशै-
र्बद्धस्य सम्प्रति सखे गमनं क्व चास्ति।।१०२।।

हे मित्र! आज भी मेरी यह बहुत तीव्र भावना है कि मैं श्री विश्वनाथ की नगरी(काशी) में शीघ्र ही निवास करूँ। किन्तु घर, पत्नी, पुत्रादि पाशों से बंधे हुए का गमन कहां हो पाता है।।१०२।।

भागीरथीविमलवारिविलग्नवप्रा
या स्थापिता स्थपतिना सुविरच्य शूले।
तापत्रयोपशमनी कमनीयकान्तिः,
काशीपुरी सुनिगमागमबोधराशिः।।१०३।।

गंगा के निर्मल जल से लगी हुई सीढ़ियों वाली नगरी स्वयं भगवान शिव ने अच्छी तरह बना कर अपने शूल पर स्थापित की थी, तीनों तापों को शान्त करने वाली, सुन्दर कान्ति वाली, वेद और शास्त्रों के ज्ञान का पुंज वह काशी नगरी है।।१०३।।

संख्यावतामखिलशास्त्रविदां न संख्या,
गौरीगणेश्वरमहेश्वरभैरवाणाम् ।
संन्यासिनां द्विजगवाञ्च मठाधिपानां,
ताम्बूलपुष्पफलविक्रयिणाञ्च यत्र ।।१०४।।

सम्पूर्ण शास्त्रों के ज्ञाताओं, गौरी के गणों तथा महेश्वर शिव के भैरवों, संन्यासियों, ब्राह्मणों, गायों और मठाधीशों, पान, पुष्प और फलविक्रेताओं की संख्या का तो वहां पता भी नहीं चलता।।१०४।।

वेदान्पठन्ति बटवः पटवः क्वचिच्च,
शास्त्राणि शास्त्ररसिका रसवन्ति नित्यम् ।
कुत्रापि शब्दनयगा विवदन्ति वादान्,
पौराणिकाः क्वचिदपि प्रवदन्ति गाथाः ।।१०५।।

कहीं निपुण ब्रह्मचारी वेद पढ़ते हैं, कहीं शास्त्रों के रसिक सरस शास्त्रों का पाठ करते हैं, कहीं शब्दशास्त्रज्ञ वाद-विवाद करते हैं, कहीं पौराणिक गाथायें कहते रहते हैं।।१०५।।

नित्योत्सवा प्रतिदिनञ्च सुमंगलानि,
पर्वाणि सप्तसु दिनेषु नवानि यत्र ।
मोक्षाय मृत्युरपि यत्र भवेदवश्यं,
भूतिर्विभूषणमहोप्यथ वाक्षमाला ।।१०६।।

जहां नित्य उत्सव होते रहते हैं, प्रतिदिन मंगलकार्य सम्पन्न होते हैं, जहां सातों दिन नये-नये पर्व रहते हैं। जहां मृत्यु निश्चित रूप से मोक्ष के लिये होती है,जहां भस्म अथवा अक्षमाला ही भूषण है।।१०६।।

यत्रेश्वरी भगवती सदयान्नपूर्णा,
तूर्णं ददाति मनसेप्सितमन्नमम्बा।
विश्वेश्वरोऽपि शरणागतवत्सलोयं,
कं कं न साधयति काममिहाश्रितानाम्।।१०७।।

जहां ईश्वरी,भगवती,दयालु अन्नपूर्णा मां मनचाहा अन्न तुरन्त दे देती हैं। शरणागतवत्सल विश्वेश्वर भी अपने आश्रितों की किस कामना को वहां पूर्ण नहीं करते?।।१०७।।

यं यं त्वमिच्छसि वरं वृणु तं तमेव,
सर्वं ददामि भवते द्विजभूषणाय।
भ्रातृप्रियाप्रहितवस्तु यदस्ति मह्य-
मानीतमत्रभवतापि च तत्प्रयच्छ।।१०८।।

जो जो वर आप चाहते हो वह मांगो, आप ब्राह्मणों के भूषण को वह सब मैं देता हूं। भाभी द्वारा भेजी गई जो वस्तु आप लाये हो वह दो।।१०८।।

विश्वम्भरेण हरिणा करुणाकरेण,
सम्प्रार्थितोऽग्रजनि आत्मविदां वरिष्ठः।
दातुं न वाञ्छति यदा त्रपयाक्षतानि,
कक्षात् प्रसह्य भगवान्स्वयमुज्जहार।।१०९।।

विश्वम्भर,दयालु हरि द्वारा मांगे जाने पर आत्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ ब्राह्मण जब लज्जा से चावल नहीं देना चाहते थे, तो भगवान ने उन की बगल से वे जबर्दस्ती स्वयं ही खींच लिये।।१०९।।

भक्त्या त्वयोपहृतमल्पमपीदमन्नं,

सन्तुष्टये सकलविश्वशरीरिणो मे।
विद्वन्नलं प्रियसुहृन्न पुनःप्रदत्तं,
भक्तिं विना धनमदान्धजनेन भूरि।।११०।।

हे विद्वन्! प्रिय मित्र! तुम्हारे द्वारा भक्तिपूर्वक लाया गया थोड़ा सा भी अन्न सकल विश्व की आत्मारूप मेरी सन्तुष्टि के लिये पर्याप्त है, किन्तु भक्तिरहित, धन के मद से अन्धे जन द्वारा दिया गया बहुत सा भी मुझे सन्तुष्ट नहीं कर सकता।।११०।।

प्रेम्णात्तुमक्षतलवान्प्रवणं समीक्ष्य,
राज्ञ्योऽपि विश्वपतिमीयुरिमं समन्तात्।
स्वामिन्विभज्य परिभुंक्ष्व पदार्थमेन-
मस्मासु विप्रसुहृदोपनतं महात्मन्।।१११।।

चावल के कणों को प्रेम से खाने में तत्पर प्रभु को देख कर विश्व के स्वामी की रानियां भी उनके चारों ओर आ गईं।' हे स्वामिन्! हे महात्मन्! अपने मित्र ब्राह्मण द्वारा लाये गये पदार्थ को हम सब को बांट कर ही खाओ'।।१११।।

संभुज्य दारतनयैः सह कृष्णदेवो,
विप्रार्थितान्नमतिमानपुरःसरं सः।
तुष्टिञ्जगाम परमां परमः कृपालु-
र्यत्तुष्टयेऽलमिह नैव भवन्ति यज्ञाः।।११२।।

अपनी स्त्री-पुत्रों के साथ ब्राह्मण द्वारा लाये अन्न को बांटकर अति सम्मान के साथ खा कर वे परम कृपालु श्रीकृष्ण अत्यन्त प्रसन्न हो गये। जब कि यज्ञ भी उन्हें प्रसन्न करने में समर्थ नहीं होते।।११२।।

सम्पूजितोऽमरवरेण सभाजितश्च,

स ब्राह्मणो जितसखः समुवाच कृष्णम् ।
संस्मृत्य कृष्ण चरितानि तवाद्भुतानि,
जीवाम्यभद्रदमनानि च शंतमानि । ।११३ । ।

देववर द्वारा संपूजित और सत्कृत, मित्र के मन को जीतने वाले वे ब्राह्मण श्रीकृष्ण से बोले- हे कृष्ण! अमंगलों को दबाने वाले और कल्याण करने वाले तुम्हारे अद्‌भुत चरित्रों का स्मरण कर-कर के ही मैं जीता हूं। ।११३ । ।

संकीर्तयंस्तव गुणान्कवयन्स्मरंश्च,
संस्मारयन्नपि पठन्परिपाठयंश्च ।
गायन्स्वयं द्विजसुतानथ गापयंश्च,
कालं नयामि च सुखेन भवज्जनोऽहम् । ।११४ । ।

तुम्हारे गुणों का संकीर्तन तथा उन पर काव्य-रचना करते हुए, स्मरण, पठन-पाठन, गायन और दूसरों को स्मरण कराते और ब्राह्मणपुत्रों से गान कराते हुए आप का यह जन(मैं) सुखपूर्वक समय बिता रहा हूं। ।११४ । ।

वृष्णीश कृष्ण करुणामय दीनबन्धो,
भक्तार्तिभञ्जन निरञ्जन मञ्जुलेज्य ।
पृथ्वीद्विजादितिजगोजहितावतार,
मन्मानसे निवस नित्यमितीशं याचे। ।११५। ।

हे वृष्णिराज, कृष्ण, करुणामय, दीनबन्धु, भक्तों के क्लेशों को नष्ट करने वाले, निरञ्जन, सुन्दर यज्ञों को करने वाले, पृथ्वी, ब्राह्मणों, देवों, गौओं तथा ब्रह्मा के हित के लिये अवतार लेने वाले, हे ईश्वर! मैं यही याचना करता हूं कि आप नित्य मेरे मन में निवास

करें।।११५।।

कूर्मावनीशमुनिमत्स्यवराहरूप,
हंसावतंस भृगुवंशज नारसिंह।
धन्वन्तरे यदुज बुद्धकुमार कल्के
मन्मानसे० ।।११६।।

हे कच्छप, पृथु, दत्तांत्रेय मुनि, मत्स्य और वराह रूप धारण करने वाले, बुद्ध, कल्कि! मैं यही याचना करता हूं कि--- ।११६।।

चाणूरमुष्टिकबकीबककंसकेशि,
भूमासुराघतृणदैत्यवृषासुरघ्न।
गोवर्धनोद्धरण देवकनन्दनीज,
मन्मानसे०।।११७।।

चाणूर, मुष्टिक, पूतना, बकासुर, कंस, केशि, भूमासुर, अघासुर, तृणावर्त, वृषासुर आदि दैत्यों को मारने वाले, गोवर्धन को उठाने वाले, देवकीपुत्र! मैं यही याचना करता हूं कि --।।११७।।

श्रीकृष्ण केशव मुकुन्द हरे मुरारे,
राधाप्रिय स्वजनरञ्जन वारिजाक्ष।
पाञ्चालिकावसनवर्धन धर्मवर्म्मन्,
मन्मानसे० ।।११८।।

हे श्रीकृष्ण, केशव, मुकुन्द, हरे, मुरारे, राधा के प्रिय, स्वजनों को आनन्द देने वाले, कमलनेत्र, द्रौपदी के वस्त्रों को बढ़ाने वाले, धर्ममार्ग दिखाने वाले, मैं यही याचना करता हूं कि----।।११८।।

धर्मानुजापुलिनपर्वतराजपुत्री;-
पूजाप्रसक्तपशुपालकुमारिकाणाम्।
वस्त्रापहारक विभो नवनीतचौर,
मन्मानसे० ।।११९।।

यमुना के किनारे पार्वती की पूजा में लगी गोपकुमारियों के वस्त्रों को हरने वाले हे प्रभु, हे माखन चोर! मैं यही याचना करता हूं कि --।।११९।।

गोविन्दगोपरिपुसंघपरान्तकाल,
गोगोपगोपरमणीरमणाच्युतेश।
पीताम्बरामरवराखिललोकपाल,
मन्मानसे० ।।१२०।।

हे गोविन्द, ग्वालों के शत्रु-समूह का नाश करने वाले, गौओं, ग्वालों और गोपियों को आनंद देने वाले, हे अच्युत, हे ईश, हे पीताम्बरधारी, समस्त देवताओं और लोकों का पालन करने वाले! मैं यही याचना करता हूं कि ---।।१२०।।

लक्ष्मीपते यदुपतेऽसुपते परेश,
वेदत्रयीपरमतत्त्व तमालवर्ण।
श्रीवासुदेव शिवमानसराजहंस,
मन्मानसे० ।।१२१।।

हे लक्ष्मीपति, यदुपति, प्राणपति, परमेश्वर, तीनों वेदों के परम तत्त्वरूप, तमाल के समान वर्ण वाले, श्रीवासुदेव, शिव के मन के राजहंस! मैं यही याचना करता हूं कि -----।।१२१।।

गीर्मे प्रगायतु गुणांस्तव तीर्थकीर्ते-

श्चेतो विचिन्तयतु ते रमणीयरूपम् ।
दृष्टिर्न चान्यविषया तव दर्शनान्मे,
त्वत्तो वृणे वरममुं वरदेश नान्यम् ।।१२२।।

हे वर देने वालों के भी स्व|मी! मै। तुम से यही वर मांगता हूं दूसरा नहीं कि मेरी वाणी तीर्थों में गाये जाने वाले तुम्हारे ही गुणों का गायन करे, मन तुम्हारे ही रमणीय रूप का चिन्तन करे, और मेरी दृष्टि तुम्हारे अतिरिक्त किसी और विषय की ओर न जाए।।१२२।।

मागारदारतनयेषु मम प्रसंगो,
भूयाद्भवच्चरणकञ्जरसप्रियेषु ।
त्वद्ध्यानपूजनरतेषु भवत्कथायां,
नित्योत्सुकेषु च महात्मसु भाववत्सु ।।१२३।।

घर, स्त्री, पुत्रादि में मेरा लगाव न हो, मेरा मन तुम्हारे चरणकमलों के रस के प्रेमी, तुम्हारे ध्यान, पूजन में रत, तुम्हारी कथाओं में नित्य उत्सुक, भावपूर्ण, महात्माओं में ही (लगा)रहे।।१२३।।

इत्यर्थितोऽर्थिसुरपादपपद्मनाभो,
विप्रर्षिणा स भगवान्पुरुषः पुराणः ।
नारायणो निजसखाय ददौ स्वभक्तिं,
सत्सम्पदञ्च मदमोहविकारहीनाम् ।।१२४।।

मांगने वालों के लिये कल्पवृक्ष के समान, पद्मनाभ, भगवान पुराणपुरुष नारायण ने विप्रर्षि द्वारा इस प्रकार की प्रर्थना करने पर उन्हें अपनी भक्ति तथा मद, मोह और विकार से हीन सत्सम्पत्ति प्रदान की।।१२४।।

लब्ध्वा वरं परमभागवतः सुदामा,
श्रीवल्लभाद्वरदराजमथाभिमन्त्र्य,
नत्वा मुकुन्दचरणौ जनकामपूरौ,
कृत्वा प्रदक्षिणमथोऽनुचचाल गेहम् । ।१२५ । ।

परमभागवत सुदामा श्रीलक्ष्मीवल्लभ से वर प्राप्त कर वरदराज से अनुमति लेकर, लोगों की कामनाओं को पूर्ण करने वाले श्रीकृष्ण-चरणों में नमस्कार कर, फिर उन की परिक्रमा कर के अपने घर की ओर चले । ।१२५ । ।

चक्रायुधेन विधिना कृतमानपूजः,
भक्तिप्रदानविगताधिरसौ द्विजन्मा ।
तद्विप्रयोगविकलः सकलं स्मरंस्तं,
शीघ्रं सुदामनगरीं समवाप विद्वान् । ।१२६ । ।

चक्रधारी कृष्ण से विधिपूर्वक की हुई पूजा और भक्ति के प्रदान से मानसिक व्याधियों से रहित वह ब्राह्मण उनके वियोग से व्याकुल होकर उनकी सब बातों का स्मरण करते हुए जल्दी ही सुदाम-नगरी पहुंच गये । ।१२६ । ।

तद्विश्वकर्मरचितं मणिकाञ्चनाढ्यं,
दिव्यं त्रिभूममखिलर्द्धियुतं विशालम् ।
हर्म्यं विभूषितकलत्रसुतातनूजैः,
सम्भूषितं भगवतः कृपयाप्तमाप । ।१२७ । ।

वहां विश्वकर्मा द्वारा रचित मणिमय और स्वर्णमय, दिव्य, अलौकिक, समस्त समृद्धि-सम्पन्न, विशाल, पत्नी-पुत्र-पुत्रियों से सुशोभित श्रेष्ठ महल को भगवान की कृपा से प्राप्त किया । ।१२७ । ।

तत्रापि नित्यविहितानि शुभानि कुर्वन्,
कर्माणि धर्मनिरतो हरितोषणानि।
गायन्सदा प्रभुगुणान्सह पुत्रदारैः,
कालेन कृष्णपदवीं समियाय विप्रः।।१२८।।

वहां भी नित्यविहित, भगवान को प्रसन्न करने वाले शुभ कर्मों को करते हुए, स्त्री-पुत्रों सहित सदा प्रभु के गुणों का गान करते हुए समय आने पर वह ब्राह्मण कृष्ण-पदवी(वैकुण्ठलोक) को प्राप्त हुए।।१२८।।

श्रीकृष्णदेवचरणाब्जमधुव्रता हे,
भक्ता विरक्तमनसो भवतो रसज्ञाः।
रस्यं रसायनमिदं जगदामयस्य,
श्रीदामनामचरितं पठत त्रिकालम्।।१२९।।

श्रीकृष्णदेव के चरणकमलों के भ्रमर हे विरक्त मन वाले रसज्ञ भक्तो! इस संसार रूपी रोग की सरस ओषधि स्वरूप श्रीदाम नामक चरित का तीनों कालों में पाठ करो।।१२९।।

विद्यार्थिनः सपदि वेदपुराणशास्त्रा-
ण्याप्तुं समिच्छथ यदीदमवश्यमेव।
उच्चैस्तरां पठत कृष्णसखस्य वृत्तं,
श्रीलोकनाथकविना रचितं नवीनम्।।१३०।।

हे विद्यार्थियो! यदि वेद, शास्त्र, पुराण, शास्त्रों की तुरन्त प्राप्ति चाहते हो, तो श्री लोकनाथ कवि द्वारा रचित श्रीकृष्ण के मित्र के इस नवीन वृत्तान्त का ऊंचे स्वर से पाठ करो।।१३०।।

अभ्यर्थये काव्यविदो विदोऽहं,
बद्धाञ्जलिर्मत्कवितां द्विजेन्द्राः।
एतामवश्यं परिपश्यतेति,
चेत्तर्हि मेऽयं सफलः प्रयासः।।१३१।।

काव्य के मर्मज्ञ विद्वानों से मैं हाथ बांध कर प्रार्थना करता हूं कि हे द्विजश्रेष्ठो! यदि आप इस का अवलोकन करेंगे तो मेरा प्रयास सफल होगा।।१३१।।

वारर्तुग्रहचन्द्रांके श्रावणव्यासपर्वणि।
समाप्तिमगमच्छुक्रे श्रीदामचरितं बुधाः।।१३२।।

सम्वत् १९६७ श्रावण शुक्ल व्यास पर्व शुक्रवार को श्रीदामचरित पूर्ण हुआ।।१३२।।

यो लोकनाथकविना रचितं सुदाम्नो,
भक्तिप्रवाहपरिपूर्णमिदं चरित्रम्।
विद्वान्पठिष्यति भविष्यति कृष्णपाद-
पद्माश्रयो जगति मुक्तसमस्तदुःखः।।१३३।।

लोकनाथ कवि द्वारा रचित(यह श्रीदामचरित) भक्तिप्रवाह से परिपूर्ण चरित्र है।जो विद्वान इसे पढ़ेंगे,संसार के समस्त दुखों से मुक्त होकर श्रीकृष्ण के चरणकमलों में आश्रय प्राप्त करेंगे।।१३३।।

इति श्रीपूज्यपादमहाकविपण्डितवरभगवद्दत्तशिष्येण श्रीवात्स्यायनमहोपाध्यायमिश्रलोकनाथकविना विरचितं, सुदामचरितं पूर्तिमगमत्।।

पूज्यपाद महाकवि, पण्डितों में श्रेष्ठ श्रीभगवद्दत्त के शिष्य वत्सगोत्रोत्पन्न महोपाध्याय कवि श्रीलोकनाथ मिश्र द्वारा विरचित यह सुदामा चरित्र पूर्ण हुआ।

श्रीकृष्णस्य कथां कथं न कथयस्याह्लादिनीं चेतसः,
यामत्यादरतो जगुःशुकमुखा हंसाः प्रशंसास्पदाः।
त्वन्तु स्वात्महितं न वेत्थ यदि मां लब्ध्वालभां भारतीम्,
नारीं वर्णयसे व्ययं न गणयस्याहोति ते मुग्धता।।१।।

मन को प्रसन्न करने वाली श्रीकृष्ण की कथा को क्यों नहीं कहते? जिसे शुकदेव आदि प्रशंसनीय परमहंसों ने बड़े आदर के साथ गाया था। यदि मुझ दुर्लभ सरस्वती(काव्यशक्ति) को पा कर भी नारी वर्णन में लगे रहकर इस शक्ति के अपव्यय का हिसाब नहीं रखते तो तुम अपने हित को भी नहीं जानते, ओह ! तुम्हारी अति मूर्खता।।१।।

त्यक्त्वा कृष्णपदारविन्दकवितां किं धूर्तयोषिद्वपु.
बीभत्सं कफवातपित्तमलमूत्रामत्रमत्यादरात्।
पद्यैर्वर्णयसे रसेन विरसं निर्लज्ज नो लज्जसे,
स्वात्मानञ्च कविं क्षितौ प्रकटयस्याहोति ते मूर्खता।।२।।

कृष्ण के चरणकमलों की कविता को त्याग कर धूर्त नारी के केवल मात्र कफ, वात, पित्त, मल, मूत्र के पात्र, बीभत्स, नीरस शरीर का अति आदर से अपने पद्यों में वर्णन करते हो, लज्जित नहीं होते और अपने आप को पृथ्वी पर कवि रूप में प्रगट करते हो। ओह! तुम्हारी मूर्खता!।।२।।

शब्दस्त्वाकृतदुष्कृतं हरिरिव त्यक्त्वातिदूरं गतः,

कोश: कौशकवीरतेव भवतीं नायाति संचिन्तित: ।
साहित्याय कृतस्तिलांजलिरये मे काव्यशक्तेधुना,
सा त्वं किङ्गतयौवनेव रमणी संकल्पसे कल्पनाम् ।।३।।

शब्द तो चारों ओर से दुष्कर्म करने वाले तुझे त्याग कर बन्दर जैसी छलांगें लगा कर अति दूर चला गया है। कोश, इन्द्र को जिस प्रकार वीरता का विस्मरण हो गया था,उसी प्रकार सोचने पर भी मेरे स्मृतिपथ में नहीं आ रहा। साहित्य को मैंने तिलांजलि दे रखी है। हे मेरी काव्यशक्ति! तुम गतयौवना रमणी के समान कल्पनाओं के संकल्प-विकल्पों में क्यों उलझी रहती हो?।।३।।

प्राज्ञा: पण्डितमानिन: परकृतां साधीयसीं त्वामपि,
नेयं शोभनबन्धनेति नितरामंकैस्तिरस्कुर्वते ।
शास्त्रायासपराङ्मुखाश्च भवतीं नैवाद्रियन्तेऽबुधा:,
रंकाशेव वृथा मदीयकविते मा मेंतरान्निर्गम: ।।४।।

हे मेरी कविते! अपने पण्डित होने का गर्व करने वाले बुद्धिमान लोग दूसरे द्वारा रचित होने के कारण सिद्धिदात्री होने पर भी तुझे ' यह सुन्दर पदबद्ध नहीं है,' इस प्रकार की टिप्पणियों से तिरस्कृत करते हैं। शास्त्राभ्यास से मुख मोड़े हुए अज्ञानी तुम्हारा आदर नहीं करते। तो भी दरिद्र की आशा के समान हो रही तुम मेरे अन्त:करण से मत निकलना।।४।।

गीतागीता न जाह्नवी पीता पूतपया न हा मया नीता
सीतापते कथा हृदयन्नैव मृषैव मे जनि: ।।५।।

गीता को गाया नहीं, पवित्र जल वाली गंगा का जल पिया नहीं, हाय! मैंने सीतापति राम की कथाओं को हृदय में स्थान दिया

नहीं। इस प्रकार मेरा जन्म व्यर्थ ही हुआ।।५।।

कलिना बलिनावधीरिता,
धरणीभारकरा नरा हरे।
तव पादपराङ्मुखा अपि,
किमु जाता जगतीह के वयम्।।६।।

हे हरि! बलवान कलियुग द्वारा प्रभावित, धरती का भार बने और तेरे चरणों से मुंह मोड़े हुए हम संसार में किस लिये पैदा हुए।।६।।

जेतलिं भगवद्दत्तशर्म्माणं सद्गुरुं कविम्।
स्वर्लोकवासिनं वन्दे विद्वद्वृन्दशिरोमणिम्।।७।।

जेतलि कुल के, सद्गुरु, कवि, विद्वानों में शिरोमणि, स्वर्गवासी श्री भगवद्दत्त शर्मा को नमस्कार करता हूं।।७।।

स्वर्गं गतायामपि मेतिहार्दम्,
दिवानिशं विस्मृतिमेति नैव।
गणेशमातेव मदीयमाता,
तां मातरं नौमि गणेशदेवीम्।।८।।

मुझ पर जिनका अत्यंत प्रेम उनके दिवंगत होने पर भी मुझे रात-दिन नहीं भूलता, गणेश की माता(पार्वती) के समान गणेशदेवी नामक उन अपनी माता को प्रणाम करता हूं।।८।।

रावलपिण्डीति नगरीरमणीरम्यभूषणः।
लोकनाथो जगन्नाथनाथो विजयतेतराम्।।९।।

रावलपिंडी नाम की रम्य रमणी नगरी के भूषण जगन्नाथ को स्वामी मानने वाले लोकनाथ, विजयी हों।।९।।

योधीते नित्यमेवेदं श्रीदामचरितं महत्।
सत्यं ब्रवीमि भूदेवाः प्रचुरं प्राप्नुयाद्वसु।।१०।।

हे ब्राह्मणो! मैं सत्य कहता हूं कि जो इस सुदामाचरित को पढ़ता है उसे खूब धन प्राप्त होता है।।१०।।

———×———

अथ श्री वात्स्यायन महोपाध्याय मिश्र लोकनाथ सूरिविरचितानि हरिहरात्मक स्तोत्राणि ।।

वात्स्यायनवंशी, कवि महोपाध्याय श्री लोकनाथ मिश्र द्वारा विरचित हरिहरात्मक स्तोत्र प्रारम्भ--

श्रीः ॐ

अथ शिवाष्टकम् ।

सदाशिवं शिवाप्रियं शिवेतरघ्नमीश्वरं,
हरं मनोजहारिणं पुरारिमन्धकान्तकम् ।
प्रजेशयज्ञखण्डनं वसुन्धराविमण्डनं,
जटाधरं धराधरं कृपाकरन्नमाम्यहम् ।१ ।

सदा काल्याणकारी, पार्वती जी के प्रिय, शिवेतर अशुभ को नष्ट करने वाले, कामदेव का वध करने वाले, त्रिपुरासुर के शत्रु, दक्ष यज्ञ को भ्रष्ट करने वाले, भूमण्डल को सुशोभित करने वाले, पृथ्वी को धारण करने वाले, जटाधारी हमारे उपर कृपा करने वाले शिव को मैं नमस्कार करता हूं। ।१ ।।

मृकंडुसूनुमन्तकाद्विमोचनं त्रिलोचनं,
कुमारचन्द्रशेखरं नदीधरं स्मराम्यहम् ।
प्रशान्तगौरविग्रहे मदादिदोषनिग्रहे,
विभूतिभूषिते परे मनोहरेऽस्तु मे मनः ।।२ ।।

मार्कण्डेय मुनि को यमराज से मुक्त करने वाले, त्रिनेत्र, बाल

चन्द्रमा को मस्तक पर धारण करने वाले, सिर पर गंगा को धरण करने वाले, गौर शरीर, शांतरूप, मद आदि विकारों से शून्य, भस्मधारी, परम मनोहर शिव में मेरा मन लगा रहे।।२।।

कपालमालिकागले लसद्भुजङ्गहारिणि,
हिमालये विहारिणि मनो ममास्तु सांप्रतम्।
समुद्रमन्थनोद्भवं सुरासुरार्तिदं विषं,
निपीय नीलकंठतां गतो गतिर्ममास्तु स:।।३।।

गले में कपाल माला तथा सर्पों की माला धारण किये, हिमालय में विचरण करने वाले, समुद्रमंथन से उत्पन्न, देव-दानवों को दुख देने वाले विष को पीकर, नीलकंठता को प्राप्त शंकर जी मेरी गति हों।।३।।

नमोस्तु ने महेश मे मनोरथं चिरोद्भवं,
भवत्पदाब्जसेवने त्वमाशुतोष साधय।
त्वदीयमायया भ्रमन्ननेकलक्षयोनिषु,
निराश्रय: सदाश्रयं भवन्नमाश्रयेधुना।।४।।

हे देवताओं के स्वामी! आपको नमस्कार है। आपके चरणकमलों की सेवा की बहुत दिनों से संचित हमारी अभिलाषा को आप आशुतोष पूरी करें। आपकी माया से भ्रमित लाखों योनियों में भटकते हुए मैं निराश्रित, सदा आश्रय देने वाले, तपस्वियों में श्रेष्ठ आप का आश्रय, लेता हूं।।४।।

मनस्तपस्विनां वरे गिरीन्द्रनंदिनीधवे,
भवे भवाध्वपारगे चिरम् रमस्व शंकरे।
इमां मदीयवासनां त्रिलोकनाथ पूरय,

यथा विभो भवे भवे भवन्तमेव भावये।।५।।

हे मेरे मन! तपस्वियों में श्रेष्ठ, पार्वती के पति, संसार सागर से पार ले जाने वाले, शंकरजी में देर तक रमण करो। हे त्रिलोकीनाथ! मेरी इस कामना को पूरी करो कि जन्म-जन्म में आप में ही मेरी भावना हो।।५।।

विरञ्चिना विनिर्मितं प्रपालितञ्च विष्णुना,
चराचरं दिनात्यये भवान्करोति भस्मसात्।
बलाधिक्ने सुराधिपे स्वभक्तदु:खबाधके,
परावरेश्वरे मनो महेश्वरे रमस्व भो:।।६।।

ब्रह्मा द्वारा रचित, विष्णु द्वारा पोषित जड़-चेतन संसार को दिन की समाप्ति पर आप नष्ट करते रहते हैं। अत: हे देवताओं के ईश! आप में बल अधिक है। अपने भक्तों के दुखों को दूर करने वाले परात्पर महेश्वर में हे मन! रमण करो।।६।।

अये मनश्चिरं मया कदिन्द्रियार्थसेवने,
विमोचितं न शोचितं वृथा गतं वयोधुना।
भजस्व भक्तवल्लभं दयालुमीशमव्ययम्,
अजेंद्रविष्णुवंदितं सुकाशिकापुराधिपम्।।७।।

हे मन! अपने को तूने अनन्त काल से कष्टों को प्रदान करने वाली इन्द्रियों के विषयों के सेवन से मुक्त नहीं किया। इन विषयों के कष्टों को न सोच आज तक की आयु व्यर्थ ही गयी। अत: भक्तवत्सल, दयालु, ईश्वर, अविनाशी, कभी न जन्मने वाले, ब्रह्मा, इन्द्र, विष्णु से पूजित काशी पुरी के स्वामी का भजन कर।।७।।

चिरं मयानुलालितं प्रियेषु भोग्यवस्तुषु,
न खिन्नतां त्वमेषि किं मरीचिकासमेषु भोः।
विचारितं यदा त्वया न सारमस्ति संसृतौ,
विनेन्दुशेखरं तदा सदा तमेव चिन्तय।।८।।

संसार की भोग्य वस्तुओं के लिये बहुत दिनों से इच्छुक हो मृगतृष्णा के समान इस संसार के विषयों में खिन्नता का अनुभव नहीं किया। जब तुमने यह विचार कर लिया है कि चन्द्रशेखर के बिना सृष्टि में कोई सार नहीं है तो सदा उसी का चिन्तन कर।

सुरावलादिपिण्डिकापुरीनिवासिना मया,
त्रिलोकनाथनामकेन निर्मितं शिवाष्टकम्।
पठन्ति ये नरास्त्रिसंध्यमादरान्मुदा सदा
लभन्ति ते बलं धनं वयाधिकञ्च शंकरात्।।९।।

रावलपिडीं निवासी लोकनाथ द्वारा निर्मित इस शिवाष्टक का जो तीनों समय आनंद और आदर से पाठ करेंगे, वे धन, आयु आदि शंकरजी से प्राप्त करेंगे।।९।।

इति शिवाष्टकम्।

अथ श्रीकृष्णाष्टकम्

पयः पयोधिजाकराम्बुजेन लालितं हरेः,
श्रियां पदं पदाब्जकं जगंत्समुद्रकुम्भजम् ।
उमामहेश्वराजदेवरार्जराजसेवितं
हितं सितेतरत्तमोहरम्ममास्तु मानसे ।।१।।

समुद्रपुत्री लक्ष्मी के कर-कमलों से सेवित जिन के चरण- कमल लक्ष्मी के स्थान रूप हैं, संसार-सागर को सुखाने में अगस्त्य के समान, पार्वती, शिव, ब्रह्मा. इन्द्र आदि से सेवित, हितकारी, श्यामवर्ण, अन्धकार को हरने वाले प्रभु मेरे मन में वास करें।।१।।

कदम्बकेसराम्बरे यशःसितीकृताम्बरे,
ब्रजांगनाचकोरिकाक्षपाकरे कृपाकरे।
कलिन्दनन्दिनीतडागनागमस्तकोपरि,
प्रनर्तने विकर्तनप्रभे प्रभौ मनोस्तु नः ।।२।।

कदम्ब और केसरिया वस्त्रधारी, अपने यश से आकाश को सफेद किये हुए, व्रजवासिनी रूपी चकोरियों के लिये चन्द्रमा के समान, कृपालु, यमुना में स्थित(कालिया) नाग के मस्तक पर नृत्य करते हुए, सूर्य के समानं प्रभु में हमारा मन लगा रहे ।।२।।

वनस्रजे किरीटिने मयूरबर्हधारिणे,
रणत्सुनूपुरांघ्रये वनांगनाविहारिणे,
स्वभक्तकल्पपादपाय यादवाय मायिने,
फणीन्द्रतल्पशायिने स्वदायिने नमो नमः।।३।।

वनमाला, मुकुट, मोरपंख धारण करने वाले, शब्द करते हुए नूपूरों को चरणों में पहिने, वनांगनाओं में विहार करने वाले, स्वभक्तों

के लिये कल्पवृक्ष के समान, यादव, मायापति, नागराज की शैया पर सोने वाले, धनदाता को नमस्कार हो।।३।।

द्विजातिगोमहीभयप्रणाशनाय गोकुले,
विरञ्चिना समर्थितो बभूव नन्दसद्मनि।
व्रजस्य रक्षणाय यो बभार सप्तहायनः,
महीधरं महीधरो रमावरः पुनातु माम्।।४।।

ब्राह्मणों, गौओं और पृथ्वी के भय को नष्ट करने वाले, गोकुल में ब्रह्मा द्वारा नन्दगृह में जो समर्थित हुए, व्रज की रक्षा के लिये जिन्होंने सात दिन तक पर्वत को धारण किया, पृथ्वी को धारण करने वाले वे रमापति मुझे पवित्र करें ।।४।।

बकीबकासुरादिदैत्यनाशनं महाशनं,
दरारकञ्जकौस्तुभैरलंकृतं चतुर्भुजम्।
गुडालकावृताननेन्दुमब्जफुल्ललोचनं,
विमोचनं भवाम्बुधेर्दिनेशरोचनं भजे।।५।।

पूतना, बकासुर आदि दैत्यों का नाश करने वाले, महाभोजन करने वाले, शंख, चक्र, कमल और कौस्तुभ मणि से शोभित, चतुर्भुज, घुंघराले बालों से ढके हुए मुख वाले, कमल के समान खिली आंखों वाले, भवसागर से छुड़ाने वाले, सूर्य के समान प्रभा वाले श्रीकृष्ण का मैं भजन करता हूं।।५।।

शरन्निशासु चंद्रिकासु चंद्रवक्त्रसुन्दरी,
गणे ननर्त नाटकीयलास्यताण्डवप्रियः।
सुगोपिकाद्वयेद्वये निबद्धबाहुकंधरे,

निरन्तरोन्तरं गतो ममान्तरे विराजताम् ।।६।।

शरद् ऋतु की रातों की चांदनी में, चन्द्र के समान मुख वाली सुन्दरियों के समूह में नाटकीय लावण्य और नृत्य के प्रेमी, दो-दो गोपियों के ब. ' कंधों पर हाथ रखते हुए जिन्होंने निरन्तर नृत्य किया ऐसे श्रीकृष्ण निरन्तर मेरे अन्तःकरण में विराजमान हों ।।६।।

यमस्वसुः सुसैकते ललासरासलीलया,
व्रजौकसां विलासिनीभिरच्युतः समर्चितः ।
कटीनिबद्धकिंकिणीकशिञ्जितेन शर्म्मदः,
लयस्वरेषु तालकेषु शिक्षितोस्तु मे हृदि ।।७।।

यमुना के किनारे सुन्दर रासलीला के समय व्रजवासियों की पत्नियों द्वारा पूजित, कमर में बंधी घंटियों के स्वरसे कल्याण- कारी, लय, स्वर और तालों में सुशिक्षित कृष्ण मेरे हृदय में निवास करें ।।७।।

स्तनंधयेन गोरथस्तिरस्कृतोंघ्रिताडनैः,
गरिष्ठवस्तुपूरितः स चूर्णितः परापतत् ।
तृणासुरोऽपि शैशवे गलेवलंब्य पातितः,
स मेग्रजन्मसंततिन्निकृन्ततां निकृन्तताम् ।।८।।

स्तनपान की शैशवावस्था में पूतना का वध किया, भारी-भारी वस्तुओं से भरा छकड़ा उनके द्वारा पीटने पर चूर-चूर हो कर धरती पर गिर गया(और उस से पिस कर शकटासुर मारा गया), तृणासुर को भी बचपन में ही गला दबा कर मार दिया, ऐसे कृष्ण मेरे आगामी जन्मों की परम्परा को काट दें ,काट दें ।।८।।

इतिश्रीकृष्णाष्टकम्

अथ श्रीरामचन्द्राष्टकम्

रघूत्तमं सलक्ष्मणं विदेहनन्दिनीधवं,
निशाकराननं नवीनकञ्जमञ्जुलोचनम्।
वनच्छविं स्वतेजसा निवारकं रविच्छवेः,
शुकास्यनासिकम्मुदा सदा हरिं स्मराम्यहम्।।१।।

रघुवंशियों में श्रेष्ठ जानकीपति, चन्द्रवदन, नवकमल के समान सुन्दर नेत्रों वाले, बादल जैसी शोभा वाले, अपने तेज से सूर्य की शोभा को भी लज्जित करने वाले, तोते के मुख जैसी नाक वाले भगवान राम को तथा लक्ष्मण को मैं आनंद से स्मरण करता हूं।।१।।

मुनीन्द्रयज्ञकारकं सुकेतुजाविदारकं,
सुबाहुदैत्यमारकं प्रचारकं सुकर्म्मणाम्।
द्विजाग्र्यदारतारकं पयोनिधौ विहारकं,
कुमारकं भजे नृपस्य रामनामधारकम्।।२।।

मुनि विश्वामित्र के यज्ञ को पूर्ण करवाने वाले, ताड़का तथा सुबाहु दैत्य को मारने वाले, सत्कर्मों के प्रचारक, द्विजराज गौतम की पत्नी अहिल्या को तारने वाले, समुद्र में निवास करने वाले, राजपुत्र, राम नाम वाले का मैं भजन करता हूं।।२।।

विदेहजास्वयंवरे क्षितीशपूर्णसंसदि,
गरिष्ठमैश्वरं धनुर्न कोप्यधिज्यमाकरोत्।
महर्षिणा समीरितः स विश्वबंधुना स्वयं,
बभञ्ज लीलयैव यो द्रुतं ममास्तु मानसे।।३।।

सीता-स्वयंवर में, राजाओं से भरी सभा में, अत्यन्त भारी

शिव-धनुष पर जब कोई भी डोरी नहीं चढ़ा सका तो महर्षि विश्वामित्र से प्रेरित हो कर जिन्होंने खेल-खेल में उस धनुष को तुरन्त तोड़ दिया वे राम मेरे मन में निवास करें।।३।।

प्रियावशीकृतस्य चक्रवर्तिनो धरापतेः,
पितुर्निदेशतो विवेश दण्डिकावनं विभुः।
गुहं विनेतुमागतं हृदापगुह्य चान्त्यजं,
अपीपबत्स्वपादयोः करोतु मेपि भावनाम्।।४।।

अपनी प्रिया कैकेयी के वश में आये हुए पिता महाराज दशरथ के निर्देश से जब प्रभु दण्डक वन में प्रविष्ट हुए तो रास्ते में उन्हें ले जाने के लिये आये अन्त्यज गुह को हृदय से लगाकर अपना चरण-जल पिलाया। वे राम मुझ पर भी प्रेम-भावना करें।।४।।

खरत्रिमूर्द्धदूषणान् दशास्यसैन्यभूषणान्,
पुलस्त्यकीर्तिदूषणाननीनशत् क्षणेन यः।
चकार शूर्पणासिकां विनासिकां स राघवः,
विराधबाधकः सदा कबंधहा पुनातु माम्।।५।।

खर, दूषण, त्रिशिरा नाम के पुलस्त्य मुनि की कीर्ति को दूषित करने वाले, रावण की सेना के भूषणों को जिन्होंने क्षण भर में नष्ट कर दिया और शूर्पणासिका को नासिकारहित कर दिया, विराध तथा कबन्धासुर को नष्ट करने वाले वे राम मुझे पवित्र करें।।५।।

रणेतियुद्धशालिनं निहत्य बालिनं बली,
सुकण्ठमात्ममित्रकं कपीश्वरं बभार यः।
निबध्य सेतुमम्बुधौ विभावरीचरैः समं,

दशाननाननावलिं चकर्त सोस्तु मे हृदि।।६।।

जिस बली ने युद्ध में अति बलशाली बाली को मार कर अपने मित्र वानरराज सुग्रीव का भरण-पोषण किया , समुद्र पर पुल बांध कर निशाचरों सहित रावण की मुख-पंक्ति को काट दिया वे(राम) मेरे हृदय में रहें।।६।।

तिरस्कृतं स्वपूर्वजेन देशतो बहिष्कृतं,
निराश्रयं विभीषणं निशाचराधिपं व्यधात्।
शवाशिनं गतायुषं जटायुषं चतुर्भुजं,
विधाय विष्णुधामनि न्यवेशयत्स मे गतिः।।७।।

अपने बड़े भाई से तिरस्कृत, देश से बहिष्कृत, निराश्रय विभीषण को राक्षसराज बना दिया, शव खाने वाले, वृद्ध जटायु को चतुर्भुज रूप देकर जिस ने विष्णुधाम में प्रविष्ट करवा दिया वही (राम) मेरी गति हैं।।७।।

विजित्य जानकीं प्रियां पतिव्रतां परीक्ष्य च,
सलक्ष्मणः समीरजांगदादिभिः समं प्रभुः।
स पुष्पकाश्रयः श्रियाः पतिर्गतिर्महात्मनाम्,
अवाप राजधानिकां प्रधानकः पुनातु माम्।।८।।

विजय पा कर प्रिया पतिव्रता जानकी की परीक्षा ले कर लक्ष्मण, हनुमान, अंगदादि के साथ पुष्पक विमान पर बैठ कर जो लक्ष्मीपति और महात्माओं की गति राजधानी पहुंचे, वे राम मुझे पवित्र करें।।८।।

।। इति श्रीरामचन्द्राष्टकम्।।

अथ श्यामाष्टकम्

मेघश्यामं वारिजनेत्रं करवेत्रम्,
गोपीकान्तं गोपकुमारं सुकुमारम्।
वृन्दारण्ये किंकृतपुण्ये विहरन्तं,
वारं वारं संसृतिसारं प्रणमामि।।१।।

बादलों जैसे श्याम वर्ण के, कमलनेत्र, हाथ में छड़ी लिये हुए, गोपियों के प्रिय, सुकुमार, पवित्र वृन्दावन में विहार करने वाले, सृष्टि के सार श्यामसुन्दर को बार बार प्रणाम करता हूं।।१।।

राधाराज्ञीमोहितचित्तं जनवित्तम्,
नन्दानन्दं बालमुकुन्दं व्रजचन्द्रम्।
विश्वेदेवा यं कृतसेवाः प्रणमन्ति,
वा० वा०।।२।।

राधारानी से मोहित चित्त वाले, लोगों के धन, नन्द को आनन्द देने वाले, बालमुकुन्द, व्रजचन्द्र, विश्व के देवता जिन की सेवा करके प्रणाम करते हैं, उस सृष्टि के सार-----।।२।।

चिंत्यं चित्ते चिद्घनरूपं यदुभूपं,
कृष्णातीरे कुञ्जकुटीरे रममाणम्।
गोपीवृन्दैः सार्द्धमुदारैर्नटवेषम्,
वा० वा०।।३।।

मन से अचिन्तनीय, चिद्घनरूप, यमुनातट पर कुञ्जकुटीर में गोपियों के समूह के साथ रमण करते हुए, नटवरवेषधारी, उस सृष्टि के सार......।।३।।

गेयं वेदाभ्यासरसज्ञैर्मुनिवृन्दैः,
ध्येयं चित्ते वृत्तिनिरोधात्परहंसैः ।
मेयं नानाशास्त्रविवादैर्न कदापि,
वा० वा० । ।४ । ।

वेदाभ्यास के रस को जानने वाले मुनिवृन्द द्वारा गाये जाने योग्य, चित्तवृत्ति के निरोध द्वारा परमहंसो से ध्यान करने योग्य, नाना शास्त्रों के विवादों से भी अनुमान न लगाये जा सकने वाले उस सृष्टि के सार को ----।।४।।

यस्मिन् सूर्यो भाति न चन्द्रो न च वायुः,
नो वा वाणी वेदपुराणी भणतीशम् ।
यस्मिन् सत्येऽसत्यमपीदं सदिवाभाति,
वा० वा० । ।५ । ।

जिस में न सूर्य चमकता है न चन्द्रमा, जिस ईश्वर का बखान वेद-पुराणों .की वाणी भी नहीं कर सकती। यह असत्य जगत भी जिस सत्य स्वरूप में सत्य सा प्रतीत होता है उस सृष्टि के सार को....।।५।।

संसारेस्मिन् सर्वमसारं परिवारम्,
श्वः श्वो विश्वं दृष्टविनष्टन्ननु मत्वा।
एकं शेषं यं प्रभविष्णुं निवसन्तम् ,
वा० वा० । ।६ । ।

इस संसार में सब कुछ असार है, चारों ओर व्याप्त यह दृश्यमान विश्व कल नष्ट होने वाला है, ऐसा मान कर एकमात्र शेष रहने वाले प्रभावशाली, उस सृष्टि के सार को ------।।६।।

कंसध्वंसम् कृष्णमनन्तं भगवन्तम्,
लक्ष्मीकांतं शान्तमुदारं भवपारम्,
यस्मिन् ज्ञाते ज्ञातमशेषं भवतीदम्,
वा० वा०------- । ।७ । ।

कंस को मारने वाले, अनन्त, भगवान, शान्त, उदार, भवसागर से पार ले जाने वाले, लक्ष्मीपति, जिसे जानने पर यह सब कुछ ज्ञात हो जाता है, उस सृष्टि के सार को ----- । ।७ । ।

विद्याविद्याकांरितभेदात्प्रवदन्ति,
यं सर्वज्ञं चाल्पविवेकं निगमज्ञाः ।
एको लक्ष्यो वाक्यविशेषैर्नितरां यः,
वा० वा० -------- । ।८ । ।

विद्या और अविद्या द्वारा किये गये भेद के कारण शास्त्रज्ञ जिसे सर्वज्ञ या अल्पविवेकी कहते हैं, वाक्य-विशेषों से जो अच्छी तरह पहचाना जाने योग्य है, उस सृष्टि के सार को---- । ।८ । ।

श्लोकाष्टकं भगवतः पुरुषोत्तंमस्य,
श्रीलोकनाथकविना स्तुतये व्यधायि ।
यो नित्यशः पठति तस्य मनो मुकुन्दे,
लीनं भविष्यति गमिष्यति चात्मतापः । ।९ । ।

श्री लोकनाथ कवि ने भगवान पुरुषोत्तम की स्तुति के लिये इस श्लोकाष्टक की रचना की हैं। जो इसका नित्य पाठ करेगा उस का मन मुकुन्द में लीन होगा और आत्मताप नष्ट हो जाएगा । ।९ । ।

। । इति श्यामाष्टकम् । ।

अथ श्रीकृष्णस्तवः

अयि कृष्ण कृपानिधे हरे,
कमलालालितपादपंकज।
भव मे शरणं भवाम्बुधौ,
पतितस्याघवतौघनाशन।।१।।

हे कृष्ण! कृपा के समुद्र, लक्ष्मी के द्वारा सेवित चरणकमल वाले, भवसिन्धु में पड़े हुए लोगों के पापों का नाश करने वाले, मैं आपकी शरण में आता हूं।।१।।

अयि माधव राधिकापते,
वसुधामण्डन पापखण्डन।
मम कामविकारदूषितं,
हृदयं शोधय बोधयाधुना।।२।।

हे राधिका के पति माधव, पृथ्वी के भूषण, पापों को नष्ट करने वाले, काम के विकार से दूषित मेरे हृदय के पापों को ज्ञानयोग से आप शुद्ध करें और ज्ञान दें।।२।।

महिमानमवाप्तुमच्युत,
जगदुदयस्थितिनाशकारिणः।
तव नन्दकुमार पद्मजो,
वदनैर्न चतुर्भिरीश्वरः।।३।।

संसार की उत्पत्ति, स्थिति और संहार को करने वाले हे अच्युत! हे नन्दकुमार! पद्म से उत्पन्न ब्रह्माजी अपने चारों मुखों से भी आपकी महिमा का वर्णन करने में असमर्थ हैं।

वहुभोगविलासवासना,
पूरितमानसरुग्भिरीश्वर।
अतिदीनधियं विलोक्य मां,
कृपया स्वीयपदं प्रदर्शय।।४।।

भोग-विलास की वासना के अनेक मनोरोगों से भरे हुए मुझ दीनबुद्धि को देखकर कृपा कर अपने पद(स्थान) का दर्शन करा दें।।४।।

भगवन्भवतापतापित:,
परमानन्द भवाब्धिपोत हे।
तव कल्पतरो समाश्रये,
छायां सर्वसुखप्रदायिनीम्।।५।।

हे परमानन्द देने वाले प्रभु! संसार के दुख से दुखी के लिये संसार-समुद्र के जहाज! आपके मनोरथ पूर्ण करने वाले आश्रय की सुखद छाया का मैं आश्रय लेता हूं।।५।।

त्वं मे जननी त्वमेव मे,
जनकस्त्वं सहजस्तथा सुहृत् ।
त्वम्मे दयिता गृहं धनम्,
सर्वस्वं यदुनाथ मे भव।।६।।

हमारे माता, पिता, भाई. मित्र, स्त्री, घर, धन सब कुछ हे यदुनन्दन! आप ही हों।।६।।

मम मारविकारमारितं,
मन उद्वेगकरं रिपुम् महान्।
निजभक्तिसुधासुधारया,

जीवय जीवितनाथ माधव।।७।।

उद्विग्न करने वाला कामदेव के विकार से मारा हुआ मन ही मेरा महाशत्रु है, अपनी अमृतमयी भक्ति की अमृत धारा से , हे जीवननाथ, माधव! आप मुझे जीवित करें।।७।।

इति मानसहंस मामकी,
चिरकालीनभवास्ति कल्पना।
यदहं तव कीर्तिमुज्ज्वलां,
विलिखानीश शिवां यथारुचि।।८।।

हे मानसहंस! चिरकाल से मेरी यह कल्पना है कि हे ईश! मैं तुम्हारी कल्याणकारिणी उज्ज्वल कीर्ति को यथारुचि लिखूं।।८।।

नाहं वल्मीकसंभवो,
न ब्रह्मा न पराशरात्मजः।
न च वा वाग्देवता विभो,
कथयामीश कथन्नु ते कथाम्।।९।।

मैं वाल्मीकि, ब्रह्मा, पराशरपुत्र व्यास, अथवा सरस्वती नहीं हूं। हे ईश्वर! आपकी कथा किसी प्रकार कहता हूं।।९।।

यदि कृष्ण पुराभवेऽभवम्,
तपसा योगबलेन वाथवा।
कथमपि तव भूरिकर्म्मणो,
गणयं गरिमाणं न वाथवा।।१०।।

यदि मैं पूर्वजन्म में तपस्या अथवा योगबल से वाणी हुआ था तब अनेककर्मा तुम्हारी गरिमा की गणना मैंने की थी या नहीं की

थी? ।।१०।।

अथवापि हि भाविजन्मनि,
यदि भुयासमहं सरस्वती।
कथमपि महिमानमीश ते,
ब्रूयासं किमु वा न वाथवा।।११।।

अथवा अगले जन्म में यदि सरस्वती बन जाऊं तब हे ईश! जैसे तैसे आप की महिमा का मैं वर्णन कर भी पाऊंगा अथवा नहीं।।११।।

भगवंस्तव माययाचिरं,
प्रमदापुत्रधनादिषु भ्रमन्।
हृदि संस्थितमात्मदं हरिं,
हर हर मन्दमतिर्न चेतये ।।१२।।

हे भगवन्! हे हर हर! तुम्हारी माया से चिरकाल तक स्त्री, पुत्र, धनादि में भ्रमण करते हुए, हृदय में स्थित आत्मज्ञान को देने वाले हरि को मैं मन्दमति नहीं पहिचानता।।१२।।

अयि मित्र मनः प्रसीद मे,
त्यज चलतां चल साधुवर्त्मनि।
भज बालमुकुन्दमीश्वरं,
भव रसिको हरिसंकथासु च।।१३।।

हे मित्र मन! प्रसन्न होओ, चंचलता को छोड़ो, साधु मार्ग पर चलो, बालमुकुंद ईश्वर का भजन करो, भगवान की कथाओं के रसिक बनो।।१३।।

अयि चिन्तय चित्त माधवं,
सततं कीर्तय केशवं सखे।
स्मर नन्दसुतं जपेति च,
हे मधुसूदन हे दयानिधे।।१४।।

हे मन! माधव का चिन्तन करो, केशव का कीर्तन करो, हे मित्र! नन्दनन्दन का स्मरण करो और हे मधुसूदन! हे दयानिधे! ऐसा जपते रहो।।१४।।

अयि मामक मित्र सन्मनः
शृणु वार्ताम् सुखदायिनीं पराम्।
जहि विषयविलासवासनां,
भज यदुनंदनपादपल्लवम्।।१५।।

हे मेरे मित्र अच्छे मन! परम सुखदायिनी भगवान की वार्ता को सुनो, विषय-विलास-वासना को त्याग दो, और यदुनंदन के चरणपल्लव का भजन करो।।१५।।

चिरवाहिनीमीशनिर्मितां,
कठिनां मोहमयीन्नदीं मनः।
यदि तर्तुमिहेच्छसि प्रभुं,
जप वसुदेवकुमारमीश्वरम्।।१६।।

चिरकाल तक बहनेवाली, कठिन मोहमयी इस नदी को हे मन! यदि पार करना चाहते हो तो प्रभु, वासुदेव ईश्वर का जप करो।।१६।।

अयि मामक नयन पश्य भो,
संसारे यद्वस्तु सद्भवत्।
यदि पश्यसि नस्थिरञ्चिरं,

किमपि पश्यसि किन्न केशवम्।।१७।।

हे मेरी आंख! देखो, संसार में जो भी वस्तु उत्पन्न हुई देखती हो उसे यदि स्थिर नहीं समझती हो तो चिरकाल तक केशव का दर्शन क्यों नहीं करती?।।१७।।

अयि सुन्दर सुन्दरानन,
रुचिरापाङ्गतरङ्गलोचन।
अतिदीनदृशं दृशा स्वया,
करुणावरुणालयाव माम्।।१८।।

हे सुन्दर मुख वाले, चंचल नयनों वाले प्रभु, हे करुणासागर, मुझ अतिदीन की अपने दृष्टिपात से रक्षा करो।।१८।।

अयि मित्र मनोऽनुधावसि,
यानर्थान्बहिरीशनिर्मितान्।
ते नहि चिरयायिनः सखे,।
भज भगवन्तमनन्तमात्मनि।।१९।।

हे मित्र मन! ईश्वर द्वारा निर्मित जिन बाह्य पदार्थों के पीछे भाग रहे हो वे देर तक साथ देने वाले नहीं, अपनी आत्मा में अनन्त भगवान का भजन करो।।१९।।

।।इति श्रीकृष्णस्तवः।।

अथ शिवस्तव:

विश्वपतिं पतिताघविनाशं, चन्द्रशिरस्कमुमाकांतम्।
शान्तमुदारविहारमपारं, संसृतिसारमनाकारम्।
शर्वमखर्वगुणार्णवमीशं, शंकरमंकणमान हरम्।
भक्तजनार्तिविभञ्जनमीड्यं, ताण्डवलास्यविलासरतम्।।१।।

विश्व के अधिपति, पतितों के पाप के नाशक, चन्द्रमा को शिर पर धारण करने वाले, उमा के पति, शिवजी, शांतस्वरूप, संसार के सार, निराकार, अनवरत विहार करने वाले, कल्याणकारी, संख्यातीत गुणों के समुद्र, शंकर, अहंकारियों के मान को हरने वाले, भक्तों के दुख को दूर करने वाले, पूज्य, ताण्डवनृत्य के विलास में लीन-।।१।।

नारदविष्णुविरञ्चिसुरेशैः पूज्यपदं विपदान्तकरम्।
दक्षजनेशमखेशनिशेशध्वंसनराहुमलं ललितम्।
हंसमहं कृतिदेवमदेवादितिजाराधितमाधितुदम्।
शम्भुमनम्बरमम्बुजनेत्रं गिरिजाभूषितवामतनुम्।।२।।

नारद-विष्णु-ब्रह्मा-इन्द्र के द्वारा सुपूजित, विपत्ति का अन्त करने वाले, दक्ष प्रजापति के यज्ञ रूपी चन्द्रमा के राहु के समान विध्वंसक, देवताओं तथा दैत्यों से पूजित, रोगनाशक, कल्याणकर, कमलनेत्र, दिगम्बर, वाम भाग में सुशोभित गिरिजा जी से युक्त शंकरजी को नमस्कार है।।२।।

श्रीगिरिगंगातीरदरीगतनीरसमर्चितलोकेशम्।
भज भो सज्जनमज्जनशीलं श्री गिरिगंगाकोटीशम्।
अद्भुतरूपं चित्रविचित्रं ठेवकविलसनमध्येशम्।

शिमलाप्रान्ते शीतलकान्ते जातशिलोदकलिंगेशम् । ।३ । ।

सनातन ब्रह्म लट्ठनिरंजन विहंगम योगी, प्राणियों के पति, श्रीगिरि पर्वत पर गंगातीरगत जल से पूजित, लोकेश, उत्तम जल से स्नान करने वाले, श्री गिरिगंगा के कोटीश की हे संतों, सेवा करो। अद्भुत रूपवाले, चित्र-विचित्र ठेवक में विलास करने वाले, शीतल और सुन्दर शिमला प्रान्त में उत्पन्न ठंडे बर्फ के शिव-विग्रह के स्वामी- । ।३ । ।

विविधसुगन्धविलेपिनमीज्यं सर्वाभयदं वीरेशम् ।
साधुजनस्य सदा सुखदायक कनकसुशोभितराजेशम् ।
भज निष्कामं श्रीशिवरामं नाथकरार्चितनाथेशम् ।
ब्रह्मसनातनयोगविहंगं लट्ठनिरञ्जनभूतेशम् । ।४ । ।

अनेक प्रकार की सुगन्धित लेपनादि से पूजित शंकरजी, वीरेश, सबके भय का नाश कर संतों को सुख देने वाले, सुवर्ण की शोभा से युक्त राजेश्वर का बिना कामना के भजन करें। नाथ के हाथों से पूजित नाथेश, सनातन ब्रह्मयोगविहंगम लट्ठनिरंजन प्राणियों के स्वामी की सेवा करें।

गंगाप्रवाहमिलिताल्पनदी पवित्रा,
पूज्या यथा सुरनरैः प्रपुनाति विश्वम् ।
श्रीमद्यतीन्द्र जगदीशगिरिप्रयुक्ता,
पुण्या भविष्यति ममापि सरस्वतीयम् । ।५ । ।

गंगा की धारा में छोटी नदी के मिलने से (वह भी) देवों और मनुष्यों से पूज्य और पवित्र हो कर विश्व को पवित्र करती है। श्रीमान यतीन्द्र जगदीश गिरि के द्वारा प्रयुक्त मेरी यह सरस्वती (कविता) भी पवित्र हो जाएगी। ।५ । ।

। । इति शिवस्तवः । ।

अथ श्रीवात्स्यायन महोपाध्याय मिश्र लोकनाथ सूरिविनिर्मित श्रीमद्यतीन्द्र सिद्धेश्वर चक्रवर्ति लट्ठनिरञ्जन-भूतनाथाविनाशितोटकाष्टकद्वयं रामकुण्डतीर्थस्तुतिश्च।

अब वत्सकुल के महोपाध्याय मिश्र लोकनाथ कवि द्वारा रचित श्रीमान् यतीन्द्र, सिद्धेश्वरचक्रवर्ती, लट्ठनिरंजन भूतनाथ अविनाशी के तोटक छन्द में दो अष्टक तथा रामकुण्ड तीर्थ की स्तुति।

ॐ पतिताश्रयदे सुखदे सुभगे,
तव विप्रमुने मनसानुदिनम्।
जगदीशदृशा दिश मे भवुकं,
शृणु लट्ठनिरञ्जन मे विनयम्।।१।।

पतितों के उद्धारक, सुन्दर सुखदायक हे ब्राह्मण मुनि! आप प्रतिदिन जगदीश्वर की दृष्टि से सम्पन्न मन से मुझे भव्य निर्देश दें। हे लट्ठनिरंजन! हमारी प्रार्थना को सुनिये।।१।।

भुवि नीचजनाहृतमानधनं,
धनहीनविहीनमतिं कृपणम्।
हृदि दुःखितमेहि दयाजलधे,
शृणु०।।२।।

संसार में नीच जनों से छिने हुए मान धनवाले, धनहीन, बुद्धिहीन, कृपण, दुखी के ऊपर दया करने वाले हे लट्ठनिरंजन! हमारी विनय को सुनिये।।२।।

गृहदारजदारभराकुलितं,
भवपंककलंकितमाधिनिधिम्।

प्रतिकूलविधिं घृणयाव विभो,
शृणु० ।।३।।

गृह, स्त्री, परिवार, पुत्र संसार की समस्त क्रियाओं के कीचड़ में फंसे हुये, मानसिक रोगों के घर, प्रतिकूल विधि वाले मुझे दया कर के बचाओ, हे लट्ठनिंजन हमारी विनय को सुनिये।।३।।

मदमारविकारयुतं सततं,
विमुखं हरपादसरोरुहत: ।
प्रसभं कुरु मामभितोभिमुखं,
शृणु० ।।४।।

कामदेव के विकार से निन्तर सताये जाने वाले, शंकरजी के पदकमल से विमुख हमारी बुद्धि अपनी ओर हठात् स्थपित करें । हे लट्ठनिरंजन! हमारी विनय को सुनिये।।४।।

अयि भूतपतेऽगतिकस्य गते,
सुमते तपसां महसाञ्जवते ।
शिरसावनतस्य तवापि पुरः,
शृणु० ।।५।।

हे भूतनाथ! अगतियों को गति प्रदायक ! महा तपस्या के तेज से युक्त बुद्धि वाले! प्रसन्न होकर आप मेरी रक्षा करो। सिर से विनत होकर आपके सम्मुख नमस्कार करता हूं। हे लट्ठनिरंजन! हमारी विनय को सुनिये।।५।।

कलिना बलिना किल किल्विषिणा,
कुहनेन पराकृतसर्वगुणम् ।

विगुणिं करुणाकर पाहि कवे,
श्रृणु० ।।६।।

पापकर्मी बलवान कलि से (हमारे) सब गुण समाप्त हो गये।(मुझ) गुणहीन के ऊपर कृपा करके हे लट्ठनिरंजन! हमारी विनय को सुनिये।।६।।

रमणी रमणस्य सुतस्य पिता
जननी श्रृणुते च यथा विनतिं।
स्वसखस्य सखा वटुकस्य गुरु:,
श्रृणु० ।।७।।

जिस तरह पति के वाक्य को पत्नी, पुत्र के वाक्य को पिता तथा जननी (माता) सुनती है, मित्र की बात को मित्र, विद्यार्थी की बात गुरु सुनता है उसी तरह से हे लट्ठनिरंजन! हमारी विनय को सुनिये।।७।।

जपयोगविरागमयी मदिरा,
मदमत्त महामहिमाम्बुनिधे।
गतदूषण विश्वविभूषण हे,
श्रृणु० ।।८।।

जप, योग, संसार-त्याग एवं भगवद्-अनुरक्ति रुपी नशे में मस्त, महामहिमा के समुद्र, समस्त विकारों से रहित, संसार की विभूति, हे लट्ठनिरंजन! हमारी विनय को सुनिये।।८।।

स्तवाष्टकं स्पष्टतरं परन्ते,
रम्यं मयाकारि यदि त्वदीये।
कुर्यात्प्रसादं हृदि सिद्धराज:,
सिद्धा मदीयापि मनोरथालि: ।।९।।

मेरे द्वारा रचित अष्ट श्लोकात्मक यह सुन्दर स्तुति यदि आपको प्रसन्न करने वाली है तो हे सिद्धराज! मेरे मनोरथों की सिद्धि हो।।९।।

।। इतिशम्।।

ॐ शरणागतकल्पतरुं रुचिरं,
चिरकालयतेन्द्रियशत्रुगणं।
गणनासुविदां प्रथमं प्रथितं,
भज लट्ठनिरञ्जन भूतपतिम्।।१।।

ॐ शरणागत का मनोरथ पूर्ण करनेवाले, सुन्दर, बहुत काल तक इन्द्रियरूपी शत्रु पर विजय प्राप्त करने वाले, ज्योतिष शास्त्र के प्रसिद्ध प्रवर्तक, प्रजापति लट्ठनिरंजन का भजन करो।।१।।

यशसो तपसाञ्च परन्निचयं,
चतुरं चतुराननरूपममुम्।
द्विजसूनुसरोरुहहंसमये,
भज-----।।२।।

यश और तपस्या के परमालय,चतुर, ब्रह्माजी के समान रूप-वाले, ब्राह्मण रूपी कमलों में हंस के समान, प्रजापति लट्ठनिरंजन का भजन करो।।२।।

निगमागममार्मिकमूर्द्धमणिं,
कृतपुण्यजनार्चितपादयुगम्।
कलिकालजपातकघातकरं,
भज-------।।३।।

वेद और शास्त्र के अर्थ को जानने वालों में श्रेष्ठ, पुण्य वाले जनों से आपके पदयुगल पूजित हैं। कलिकाल से उत्पन्न होने वाले पातकों को नष्ट करने वाले प्रजापति लट्ठनिरंजन का भजन करो।।३।।

शुभमन्त्रसुतन्त्रविधाननिधिं,
विधिलेखविमार्जनशक्तिधरं।
निजभक्तजनार्तिहरं सुकरम्,
भज------।।४।।

शुभ मंत्र और तंत्र के विधान के विशेषज्ञ, ब्रह्मा के लेख को मिटाने की भी शक्ति के धारक, अपने भक्तों के दुख को दूर करने वाले प्रजापति लट्ठनिरंजन का भजन करो।।४।।

महसा मिहरं वचसा धिषणं,
वपुषा जितवामनकं तपसा।
कपिलञ्च रुषा नृहरिं मनसा,
भज-------।। ५।।

तेज से सूर्य को, वाणी से देवगुरु को, शरीर से वामन को, तपस्या में कपिल को, क्रोध में नृसिंह को जीतने वाले प्रजापति लट्ठनिरंजन का मन से भजन करो।५।।

रघुनायकतीर्थवरे, कृपया,
कृतसेतुमुदारमपारगुणम्।
करुणावरुणालयमाशु मनः,
भज-------।।६।।

रामचन्द्र जी के श्रेष्ठ तीर्थ, में कृपा कर निवास करने वाले, उदार और अपार गुण वाले, करुणा के समुद्र, प्रजापति लट्टूनिरंजन का हे मन! भजन करो।।६।।

गिरिजागिरिजापतिभक्तिरतिं,
गणनायकभैरवशक्तिवशम्।
शुचिकर्म्मसुधर्म्मविचारपरम्,
भज---------।।७।।

पार्वती तथा गिरिजापति की भक्ति में लगे हुए, गणेश , भैरव और शक्ति को वश करने वाले, पवित्र धर्म और विचार करने वाले प्रजापति लट्टूनिरंजन का भजन करो।।७।।

मिथिलास्थललब्धजनिं सुजनिं,
जगतीसुरमुत्तमभाग्यभुवम्।
वसुधारमणीवरमण्डनकं,
भज----------।।८।।

मिथिला में सुन्दर जन्म पाने वाले, संसार में उत्तम ब्राह्मण, सद्भाग्यों के स्थान, पृथ्वी रूपी रमणी को सुशोभित करने वाले प्रजापति लट्टूनिरंजन का भजन करो।।८।।

स्तुत्यष्टकं लट्टूनिरञ्जनेदं,
भूतेश लोकेश कृतं त्वदीयम्।
प्रभो रुचिन्ते जनयेत् कदाचित्,
स्यात्तर्हि मेयं सफलः प्रयासः।।९।।

हे लट्टूनिरंजन! हे शिव, हे ब्रह्मा, यह आठ श्लोकों वाली तुम्हारी स्तुति यदि तुम्हें अच्छी लगेगी तो मेरा प्रयास सफल होगा।। ९।।

।।इति शम्।।

अथ लट्ठनिरञ्जनस्तुतिगर्भिता रामकुण्डतीर्थस्तुति

लट्ठनिरंजन की स्तुति से युक्त रामकुण्डतीर्थ स्तुति प्रारम्भ------

धन्या सा मिथिला यया शिथिलिता नाकस्थली लीलया,
यस्यां पूज्यपदारविन्दयुगलो जातो महर्षिर्भवान्।
मंत्राराधन यंत्रतंत्रविविधा विद्यानवद्या कलौ,
नष्टा प्रस्फुटिता त्वयेयमधुना तुभ्यन्नमो वर्णिनि।।१।।

वह मिथिला नगरी धन्य है जिसने अपने क्रियाकलापों से स्वर्ग को भी मात कर दिया है। जिस नगरी में पूजंयपाद आप महर्षि उत्पन्न हुए- कलियुग में नष्ट हो गई श्रेष्ठ मंत्र यंत्र तंत्र की विधि को पुन: आपने प्रगट कर दिया। उस आप संन्यासी को हम नमस्कार करते हैं।।१।।

पूज्या ते जननी यथा भगवती भागीरथी भीष्मसू:,
या ब्रह्मर्षिवरं भवन्तमलभत्सूनुं धरामण्डनं।
सिद्धं साधककामपूरसमलं विद्वच्छिरोभूषणं,
अन्या: कीट पतंगमातृसदृशा या: सांप्रतं मातर:।।२।।

जिस तरह भगवती भागीरथी राजर्षिवर भीष्म को जन्म देकर धन्य हुई उसी तरह से आप की माता पूज्य हैं, जिन्होंने पृथ्वी को सुशोभित करने वाले सिद्ध साधनारत साधकों की कामना पूर्ण करने वाले, विकार से रहित, विद्वानों के शिरोमणि आप ब्रह्मर्षिवर को जन्म दिया। अन्य मातायें तो कीट-पतंगों की माता के समान हैं।।२।।

वेदान्वक्षि तथाक्षपादविषयं व्याख्यास्यहो गौतमीं,
वाल्मीकेरपि वेत्सि वाचमणि च व्यासस्य वा पाणिने:।

काव्यंन्भावयसे स्वयं सुरसवत् सालंकृतीस्त्वत्कृती,
सत्यं ब्रूहि तु मानुषोसि भगवन्देवोसि किं वाथ वाक्।।३।।

चारों वेदों के ज्ञाता, वैशैषिकदर्शन तथा न्यायादर्शन के व्याख्याता, वाल्मीकि, व्यास, पाणिनि की वाणी को जानने वाले आप स्वयं सरस काव्य-रचना करते हो।सुन्दर अंलकृति वाली आपकी रचना है। सत्यं कहिये कि आप देवता हैं मनुष्य हैं अथवा सरस्वती ? ।।३।।

कृष्णे वृष्णिपतौ तथा न गिरिजानाथे गणाधीश्वरे,
श्रीरामेपि न मातारि स्वजनके नापि स्वगेहे रुचिः।
ब्रह्मंस्ते चरणाब्जयोरतितरामेतन्न जाने मुने,
किं मंत्रैरपकर्षितं हृत्कथं वापि त्वया किं गुणैः।।४।।

वृष्णिवंश के अधिपति श्रीकृष्ण, गिरिजानाथ शंकर, गणेश, श्रीराम, माता-पिता और गृह में भी मेरी रूचि नहीं है। हे ब्रह्मन्! आप के चरणकमलों में रति है। पता नहीं आप ने मंत्रों से मेरा हृदय खींच लिया है या अपने गुणों से?।।४।।

रघुनाथेन पाथोधौ बद्धः सेतुर्यथा पुरः।
रामतीर्थे तथा तीर्थपादेन भवताधुना।।५।।

भगवान राम ने समुद्र पर सेतु बांध कर समुद्र पार किया था। आप तीर्थपाद ने अब वैसे ही रामतीर्थ पार किया है।।५।।

रामकुण्डजलं गंगाजलादप्यधिकं कलौ।
यत्पीतं श्रद्धया लोके शूलरोगस्य मूलहृत्।।६।।

रामकुण्ड का जल कलियुग में गंगाजल से अधिक महत्त्वपूर्ण है। जो इस जल का श्रद्धा से पान करता है, उसका शूल रोग मूल से

नष्ट हो जाता है।।६।।

जम्बूद्वयवटाक्रोडे रामकुण्डं महत्सरः।
राममन्दिरमंदारपार्श्वस्थं तीर्थमुत्तमम्।।७।।

जामुन और वट के दो वृक्षों के समीप में रामकुण्ड का बड़ा तालाब है, पास में राम मन्दिर उत्तम तीर्थ है।।७।।

गुप्तगंगाजलं यस्य वामे वहति पावनम्।
समक्षे जानकीकुण्डं लक्ष्मणस्य ततोग्रतः।।८।।

जिसके बायीं ओर पवित्र गुप्त गंगाजल प्रवाहित होता है। समीप में जानकी कुण्ड तथा उसके आगे लक्ष्मण कुण्ड है।।८।।

ततो हनुमतः कुण्डं तदग्रे हरमन्दिरम्।
पर्वतोपत्यकायां यत् रम्यं रामसरोवरम्।।९।।

उसके उपरान्त हनुमान कुण्ड, उसके आगे शंकरजी का मन्दिर है। पर्वत की तलहटी में यह सुन्दर राम सरोवर है।।९।।

सार्धगव्यूतियुगले रावलपिंडीपुरादहो।
उत्तरस्यां दिशि ख्यातं तीर्थ श्रीराघवस्य यत्।।१०।।

रावलपिंडी से ढाई कोस के बाद उत्तर दिशा में प्रसिद्ध राघवतीर्थ है।।१०।।

कदाचिन्मृगयाक्रान्तमनसा शिविना पुरः।
पिपासार्तेन राज्ञात्र दृष्टं स्थानमनुत्तमम्।।११।।

किसी समय शिकार खेलते हुये राजा शिवि को प्यास लगी। (उन्होंने) यह उत्तम स्थान देखा।।११।।

शितेनैकेन बाणेन विदार्य धरणीमिमाम्।
व्यरचि जलपानार्थमेतत्तीर्थवरं परम्।।१२।।

एक ही तीव्र बाण से पृथ्वी को भेदकर उनके द्वारा जलपान हेतु निर्मित किया गया यही वह श्रेष्ठ तीर्थ है।।१२।।

विश्वामित्रोपि विप्रर्षिश्चिरं तप्त्वा तपो महत्।
अत्र लेभे प्रभुं राममभिरामं चतुर्भुजम्।।१३।।

यहां पर विश्वामित्र महर्षि ने भी बहुत दिनों तक उग्र तप करके सुन्दर, चतुर्भुज, प्रभु राम को पाया।।१३।।

कुण्डबन्धो द्वारबन्धो घाट्टबन्धोनुपूर्वशः।
अकारि मानराज्ञात्र जयपत्तनवासिना।।१४।।

द्वारनिर्माण, कुण्डनिर्माण, घाटनिर्माण यहां जयपुर वासी मानसिंह राजा ने करवाया।।१४।।

रामकुण्डं प्रचण्डाघध्वंसनं संप्रति ध्रुवम्।
सिद्धेश्वरशिरोरत्न यत्त्वया समलङ्कृतम्।।१५।।

रामकुण्ड अब प्रचण्ड पापों को भी नष्ट करने वाला हो गया है। क्योंकि, हे सिद्धेश्वरों के शिरोरत्न! यह तुम से शोभित हो गया है।।१५।।

रम्यं रामसरः परामधिकतां स्वीयां व्यनक्त्यन्यतः,
तीर्थानान्निवहादघौघदमनाद् भूमण्डले सर्वथा।
यद्विप्रर्षिवरेण सेवितमिदं स्वर्लोकमिन्द्रेण वा,
श्रीमल्लट्टनिरञ्जनेन विदुषा भूताधिपाराशिना।।१६।।

इन्द्र से सेवित स्वर्ग के समान, विप्रवर एवं ऋषिवर, विद्वान,

भूतपति, अविनाशी श्री लड्डुनिरंजन द्वारा सेवित यह सुन्दर रामसरोवर तीर्थों के समूह तथा पापनाशन के कारण भूमण्डल में अपने अन्यतम प्रभाव को प्रगट कर रहा है।।१६।।

श्रीकृष्णो मथुरां गतो मम हृदः किं द्वारिकायां पुरि,
कैलासं गिरजापतिः सगिरजः किं वाथ काश्यां प्रभुः।
सायंप्रातरथो दिवानिशि हृदि त्वं मेग्रतः पृष्ठतः।
सर्वं विश्वमिदं विभाति समये मेस्मिन्नहो त्वन्मयम्।।१७।।

श्रीकृष्ण मेरे हृदय से क्या मथुरा में चले गये हैं या द्वारिका पुरी में? पार्वतीसहित शिव कैलाश चले गये है या काशी में? सायं-प्रातः, रात-दिन, मेरे हृदय में, आगे-पीछे तुम्हीं रहते हो। इस समय अहा! सारा विश्व त्वन्मय प्रतीत हो रहा है।।१७।।

विभजन्नित्यमेवान्नं सिद्धवृन्दशिरोमणे।
प्रसिद्धिञ्च परामृद्धिं इद्धविद्य गतोस्यहो।।१८।।

हे सिद्ध-समूह-शिरोमणि! हे बढ़ी हुई विद्याओं वाले! नित्य अन्न बांटते हुए, तुम परम प्रसिद्धि और समृद्धि को प्राप्त हो गये हो।।१८।।

धन्यं त्वज्जीवनं ब्रह्मन् यस्त्वं जीवयसे बहून्।
स्वात्मार्थजीवनं यस्य न तज्जीवनमुच्यते।।१९।।

हे ब्रह्मन्! तुम्हारा जीवन धन्य हैं जो तुम अनेकों को जीवन देते हो। जिस का जींवन अपने लिये ही है वह जीवन जीवन नहीं कहलाता।।१९।।

यं देशं श्रयसे स एव सुकृती देशो विशेषोन्यतः,
यं त्वं पश्यसि चक्षुषा सकरुणं स संपदामास्पदम्।

चित्ते चिन्तयसे च यं स भवति प्रज्ञावदग्रेसरः,
यं त्वं संस्पृशसि स्वपाणिकमलेनासौ सुखी भूतले।।।२०।।

जिस देश का तुम आश्रय लेते हो वह धन्य तथा अन्य देशों में विशेष है। जिस को करुणाभरी दृष्टि से देखते हो वह सम्पत्तियों का स्वामी हो जाता है। अपने चित्त में जिस का चिन्तन करते हो वह बुद्धिमानों में अग्रगण्य हो जाता है। जिसे अपने कर-कमल से छू लेते हो वह संसार में सुखी हो जाता है।।२०।।

सुलोचनं सुद्विजमम्बुजास्यं,
शुकास्यनासं शशिशुभ्रहासम्।
सपाणिपादं सुकुमारकायं,
पद्मासनं भूतपतिन्नमामि।।२१।।

सुन्दर आंखों वाले, श्रेष्ठ ब्राह्मण, कमलवदन, तोते की चोंच जैसी नाक वाले, चन्द्र जैसी शुभ हंसी वाले तथा कोमल हाथ पांवों एवं शरीर वाले, पद्मासन में स्थित भूतनाथ को नमस्कार करता हूं।।२१।।

निष्कामा तव पादयोरति रतिर्जाता मदीया शुभा,
भाव्यं मंगलकेन केनचिदिति मे स्वान्तः समुत्कण्ठते।
किं राज्यं प्रचुरं धनं किमथवा चेतोहरा सुन्दरी।
पुत्रो वा हृदयंगमः किमु यशः स्फीतं ध्रुवं प्राप्स्यते।।२२।।

तुम्हारे चरणों में मेरा अत्यन्त निष्काम शुभ प्रेम हो गया है, मेरे अन्तःकरण को लग रहा है कि मेरा कुछ मंगल होने वाला है, राज्य, खूब धन, मन हरने वाली सुन्दरी, हृदयंगम पुत्र अथवा निश्चय ही स्थायी शुभ्र यश प्राप्त होगा।।२२।।

वाग्विलासो यथा सूनोः तनुते पितृसम्मुदम्।
तथा लोकपतेर्वाणी मुदेस्तु वरवर्णिनः।।२३।।

जैसे पुत्र का वाणी-विलास पिता के आनंद को बढ़ाता है वैसे ही लोकनाथ की वाणी श्रेष्ठ संन्यासी को आनंद देने वाली हो।।२३।।

इति श्रीलट्ठनिरञ्जनस्तुतिगर्भिता रामकुण्डस्तुतिः।

इस प्रकार श्री लट्ठनिरंजन की स्तुति से युक्त रामकुण्ड स्तुति पूर्ण हुई।

———×———

वंशवृत्तम्

श्रीमान्मान्यो वदान्यो निखिलगुणनिधिर्वत्सवंशावतंसः,
विद्यासिन्धुर्महर्षिर्हरिचरणरतो मालदेवो बभूव।
तद्वंशाम्भोधिचन्द्रो द्विजकुमुदगणाल्हादकोभूद् द्विजेन्द्रो,
लोके विख्यातकीर्तिर्दमशमनिरतः श्रीमहाराजसंज्ञः ।।१।।

श्रीमान्, मान्य, सुवक्ता, सब गुणों के निधि, वत्सवंश में श्रेष्ठ, विद्यासागर, महर्षि, हरिचरणों में लीन श्री मालदेव हुए। उनके वंशरूपी सागर के लिये चन्द्रमा के समान, ब्राह्मण रूपी कुमुदगणों को आनन्द देने वाले द्विजेन्द्र, विख्यात कीर्ति वाले दम और शम में लीन श्रीमहाराज नाम वाले हुए।।१।।

आयुर्वेदविदांवरोऽमृतकरो भूदेवकल्पद्रुमः,
श्रीमान्मानधनः कृती सुमतिमान्पुण्यश्रवा विश्रुतः।
सिंहै राजवरैः प्रदत्तविभवः पिण्डीपुरीमण्डनः,
दाता धर्मधुरन्धरो द्विजवरो योऽभून्महाराजवित् ।।२।।

आयुर्वेदवेत्ताओं में श्रेष्ठ, पीयूषपाणि, ब्राह्मणों के लिये कल्पवृक्ष समान, श्रीमान, सम्मान को ही धन मानने वाले, कर्मशील, सुबुद्धिसम्पन्न पवित्र ख्याति वाले, सिक्ख राजाओं द्वारा दिये हुए वैभव से सम्पन्न, रावलपिण्डी नगरी के भूषण, दाता, धर्म-निपुण, ब्राह्मण- श्रेष्ठ महाराज नाम के थे।।२।।

श्रीमान् मिश्रमहाराजाऽनुजन्मा जनरञ्जनः।
नाम्ना गणेशराजोऽभूद्विद्वान्वाग्मी शुचिश्रवाः ।।३।।

श्रीमान् मिश्र महराज के छोटे भाई, लोगों को प्रसन्न करने वाले श्रीमान गणेशराज मिश्र नाम के विद्वान, सुवक्ता, पवित्र प्रसिद्धि

वाले थे।।३।।

तदन्वये घनश्यामो घनश्याम इवापरः।
उदारः कीर्त्तिमान्धीमान्मनस्वी सद्गुणार्णवः।।४।।

उनके पुत्र दूसरे घनश्याम (कृष्ण) जैसे ही घनश्याम नाम वाले उदार, कीर्तिमान्, बुद्धिमान्, मनस्वी, सद्गुणों के सागर थे।।४।।

श्रीमान्मिश्रघनश्यामतनूजौ सोदरावुभौ।
कल्याणदत्त लोकेशनामानौ स्तोऽतिविश्रुतौ।।५।।

श्रीमान् घनश्याम मिश्र के दो सगे पुत्र कल्याणदत्त और लोकेश नाम के लोक में अति प्रसिद्ध थे।।५।।

तयोर्ज्येष्ठो गुणश्रेष्ठो वरिष्ठः शुभकर्मिणाम्।
प्रातः स्नायी सप्तशतीपाठकः कर्मठः सुधीः।।६।।

उन में ज्येष्ठ, गुणों में श्रेष्ठ, शुभकर्मियों में वरिष्ठ. प्रातः स्नान करने वाले, सप्तशती का पाठ करने वाले कर्मठ, बुद्धिमान-।।६।।

नगर्याः सदुपाध्यायः पूज्यः पत्तनवासिभिः।
गयादिसर्वतीर्थेषु कृतपितृक्रियः शुचिः।।७।।

नगरी के श्रेष्ठ पुरोहित, नगरवासियों के पूज्य गया आदि सभी तीर्थों में पितृ-क्रिया किये हुए, पवित्र-।।७।।

हरिवासरसंसक्तः श्राद्धकर्मणि विश्रुतः।
श्रीलः कल्याणदत्तोऽयं वरीवर्तितरां पुरे।।८।।

एकादशी व्रत करने वाले, श्राद्धकर्म में प्रसिद्ध, श्रीसम्पन्न,

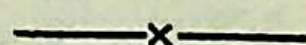
कल्याणदत्त नगर में रहते थे।।८।।

तस्यानुजस्तत्प्रयत्नप्राप्तविद्योदयः कविः।
लोकनाथो जगन्नाथपादपद्ममधुव्रतः।।९।।

उनके छोटे भाई और उन्हीं के प्रयत्नों से विद्या को प्राप्त कवि लोकनाथ जगन्नाथ के चरणकमलों के भ्रमर हैं।।९।।

श्रीदामचरितं तेन निर्मितं भक्तवल्लभम्।
अनेन भगवान्कृष्णो लोकनाथे प्रसीदताम्।

उसी ने भक्तों को प्रिय श्रीदामचरित की रचना की है। इससे भगवान् श्रीकृष्ण लोकनाथ पर प्रसन्न हों।।१०।।



संदीपनी-आश्रम में श्रीकृष्ण-सुदामा
मुखपृष्ठ का चित्र 'कल्याण' के सौजन्य से

पुस्तक प्राप्ति-स्थान
पं. कन्हैया लाल दयावन्ती-पुंज चैरिटेबल सोसायटी
पुंज लायड हाऊस, १७-१८, नेहरू प्लेस, नई दिल्ली-११००१९
दूरभाष : ०११-६२००१२३, ६२००६०२, ६२००६०[illegible]